• वर्ष ६७ • अंक १ • मूल्य ₹ ४०

जनवरी (प्रथम) २०२५

पाक्षिक

परोपकारी

महर्षि का यह चित्र ब्रह्मचारी रामानन्द के साथ सम्भवतः शाहपुरा (राजस्थान) में संवत् १९४० के प्रारम्भ में लिया गया होगा। इस चित्र की प्रति ब्र. रामानन्द को भेजने का उल्लेख महर्षि ने उन्हें लिखे अपने वैशाख शुक्ल ४, संवत् १८४० वि. (१० मई, १८८३) के पत्र में भी किया है। ब्र. रामानन्द ने स्वामी आत्मानन्द के साथ महर्षि की चिता को मुखाग्नि दी थी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के द्वारा प्रयोग की जाने वाली वस्तुएँ

चरण-पादुका (खड़ाऊँ)

रेत घड़ी

तराजू के पलड़े

ताम्र का कमण्डलु

काष्ठ का तुम्बा
(कमण्डलु)

कैंची एवं चाकू

थाली

आचमन पात्र एवं स्याही की दवातें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

*विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।*

वर्ष : ६७ **अंक :** ०१

दयानन्दाब्द: २००

विक्रम संवत् पौष शुक्ल २०८१

कलि संवत् - ५१२५

सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,१२५

सम्पादक

डॉ. वेदपाल

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१

दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४
०८८९०३१६९६१

मुद्रक- डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
८२०९५८६१६६

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-४०० रु.

पाँच वर्ष-१५०० रु.

आजीवन (२० वर्ष) -६००० रु.

एक प्रति - २०/- रु.

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
०७८७८३०३३८२

ऋषि उद्यान : ०१४५-२९४८६९८

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जनवरी प्रथम, २०२५

अनुक्रम

०१. वीतराग आचार्य - स्वामी स्वतन्त्रानन्द	सम्पादकीय	०४
०२. स्वाध्याय करो तो	विद्यावती मिश्र	०५
०३. तपोधन महाबलिदानी स्वामी...	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	०६
०४. 'योग: कर्मसु कौशलम्'	श्री रामनिवास 'गुणग्राहक'	१०
०५. आर्यसमाज कहां है? और हम कहां....	पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय	१३
* परोपकारिणी सभा, अजमेर स्थापना दिवस		१६
०६. ओं ध्वज का संदेश	स्वामी धर्मानन्द सरस्वती	१७
* नवीन प्रकाशन पर ५० प्रतिशत की विशेष छूट		१९
०७. ज्ञान सूक्त-२४	डॉ. धर्मवीर	२०
०८. निवेदन		२३
०९. व्याकरण-प्रवेशभाष्य	श्री अंकुर नागपाल	२४
१०. योग-ध्यान स्वाध्याय शिविर		२७
११. वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता		२८
* परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट		३०
* प्रवेश सूचना		३०
१२. संस्था की ओर से....		३१
* 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

वीतराग आचार्य – स्वामी स्वतन्त्रानन्द

समय-समय पर इस प्रकार के मनुष्य जन्म लेते हैं, जो व्यक्तिगत इच्छाओं-महत्त्वाकांक्षाओं से आगे बढ़कर स्वजीवन को समाज तथा राष्ट्र के हित में सर्वात्मना समर्पित कर देते हैं। इस प्रकार के मानव ही महामानव कहलाने के अधिकारी हैं। इन महामानवों की शृंखला में स्वामी स्वतन्त्रानन्द महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

पंजाब प्रान्त का लुधियाना जिला अनेक प्रमुख विभूतियों की जन्मभूमि रहा है। महान् दार्शनिक स्वामी दर्शनानन्द, अमर क्रान्तिवीर लाला लाजपत राय, देश-विदेश में हिन्दी भाषा के प्रमुख प्रचारक स्वामी सत्यदेव परिव्राजक आदि की जन्मभूमि लुधियाना जिला ही है। इसी जिले के 'मोही' नामक ग्राम में ११ जनवरी सन् १८७७ में स्वामी स्वतन्त्रानन्द का जन्म हुआ। सम्पन्न कृषक कुल तथा पुलिस अधिकारी के घर जन्म लेने वाले केहरसिंह ने वैराग्यवृत्ति के कारण लगभग बीस वर्ष की अवस्था में गृहत्याग कर तपस्वी साधु के रूप में सर्वप्रथम उदासीन साधुओं के डेरे का आश्रय लिया। अध्ययन तथा साधुओं का सत्संग करते हुए आप आर्यसमाज की ओर आकर्षित हो गये। आर्यसमाज के सम्पर्क में आने पर वेदप्रचार की धुन इस प्रकार लगी कि अहर्निश प्रचार प्रारम्भ कर दिया।

स्वामी जी की वेदप्रचार यात्रा का महत्त्वपूर्ण बिन्दु है- सन् १९०१ में विदेश में जाकर प्रचार करना। स्वामी जी सन् १९५० तक अनेक बार अनेक देशों (मॉरीशस, मलाया, गुयाना, सुमात्रा आदि) में जाकर प्रचार करते रहे।

महर्षि की जन्मशताब्दी सन् १९२५ के अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा उपदेशक-प्रचारक तैयार करने के लिए लाहौर में 'श्रीमद्दयानन्द उपदेशक महाविद्यालय' प्रारम्भ किया गया। सभा के आधिकारियों द्वारा आग्रह किये जाने पर आप प्रारम्भिक दस वर्षों तक विद्यालय के आचार्य रहे। इस अवधि में भी आप केवल एक समय भिक्षा से प्राप्त भोजन करते थे। आप केवल दोपहर बारह बजे भोजन करते थे। यदि साढ़े बारह बजे तक भोजन उपलब्ध न हो सके तब आप अगले दिन निर्धारित समय पर ही भोजन ग्रहण करते थे। दस वर्षों में आपने सभा का एक पैसा भी अपने ऊपर व्यय नहीं किया और दस वर्ष के पश्चात् आचार्य पद का त्याग कर दिया। इस अवधि में पण्डित शान्तिप्रकाश, जगदेवसिंह सिद्धान्ति, आचार्य कृष्ण (स्वामी दीक्षानन्द), स्वामी मुनीश्वरानन्द, स्वामी सर्वानन्द, पं. नरेन्द्र-हैदराबाद सदृश उपदेशक तैयार हुए।

सन् १९४२ के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में सेना में विद्रोह फैलाने के आरोप में सरकार ने आपको लाहौर के शाही किले में कैद कर दिया। १० जून, १९४३ में किले से (कैद से) मुक्त किया गया, किन्तु सरकार ने उसी रात्री में एक ही स्थान पर निरुद्ध (नजरबन्द) रहने का आदेश दिया और यह नजरबन्दी दो अक्टूबर सन् १९४४ तक रही। यह समाचार 'प्रताप' में ८ अक्टूबर सन् १९४४ में प्रकाशित हुआ। इस कैद में आपको अन्धेरी कोठरी (Dark Cell) में रखकर कठोरतापूर्वक पूछताछ की जाती थी।

दलितोद्धार आर्यसमाज का प्रारम्भ से ही लक्ष्य रहा है। महर्षि ने स्वयं राजपुत्र और दरिद्र के सन्तान को तुल्य खान-पान तथा समान शिक्षा का विधान किया है। कांग्रेस के सन् १९१९ के अमृतसर अधिवेशन में स्वामी श्रद्धानन्द ने दलितोद्धार कार्यक्रम को कांग्रेस के एजेण्डे में शामिल करने का प्रस्ताव (अपने स्वागताध्यक्ष के भाषण में) किया था। स्वामी स्वतन्त्रानन्द उस सम्मेलन में भी सम्मिलित थे।

जम्मू में दलितोद्धार के लिए आर्यवीर रामचन्द्र का बलिदान हुआ। स्वामी स्वतन्त्रानन्द, महात्मा हरिराम तथा अनन्तराम आदि आर्यों के साथ जम्मू गए। किसी विवाह आदि में कभी सम्मिलित न होने वाले महात्मा अपने भक्त किशनसिंह (दलित परिवार में जन्मे) के विवाह में भी सम्मिलित हुए।

स्वामी जी महाराज का मत था कि दलितों का आर्थिक उद्धार महत्त्वपूर्ण है। शेष बुराईयां दूर करना इतना कठिन नहीं है।

हैदराबाद के नवाब मीर उस्मान अली द्वारा हिन्दुओं के धार्मिक अधिकारों तथा आर्यसमाज के प्रचार पर लगे प्रतिबन्ध के विरुद्ध आर्यसमाज ने नवाब के विरुद्ध सत्याग्रह किया। हैदराबाद सत्याग्रह के आप फील्ड मार्शल रहे। सत्याग्रहियों को प्रेरितकर भेजने का दुष्कर कार्य सफलतापूर्वक आपने किया। लोहारू में नवाब लोहारू के गुण्डों द्वारा सिर पर कुल्हाड़े के वार सहकर भी आप अपने कर्त्तव्य से कभी विचलित नहीं हुए।

स्वामी जी आजीवन मान-अपमान तथा लोकैषणा से दूर रहे तथा अवसर आने पर सभा संगठन के अधिकारियों को सर्वात्मना आर्थिक सहयोग प्रदान कराते रहे। स्वामी जी ने धन संग्रह के लिये कभी यात्रायें नहीं की, अपितु आर्यपत्रों में अपील निकालने मात्र से ही यथेष्ट धन संग्रह होता रहा। नजरबन्दी की अवधि में सत्यार्थप्रकाश का गुरुमुखी लिपि में अनुवाद किया।

महर्षि द्विजन्मशताब्दी वर्ष में आर्यसमाज में पद, पैसा, प्रतिष्ठा आदि की दौड़ से दूर रहकर वीतराग, अजेय योद्धा तथा धर्माधिकारी की अनेकविध भूमिकाओं का सफल निर्वहन करने वाले आचार्य का स्मरण स्यात् आर्यसमाज में नवजीवन का संचार कर सकेगा। जन्मतिथि पर विनम्र सादर स्मरण।

डॉ. वेदपाल

स्वाध्याय करो तो

- विद्यावती मिश्र

स्वाध्याय करो तो कठिन सरल बन जावे।
शूलों में उतनी शक्ति न जितनी पग में
मंजिल में उतना ओज न जितना मग में
साधना कहो तो सिद्धि स्वयं मुस्काये।
स्वाध्याय करो तो कठिन सरल बन जाये!!

आलस्य स्वयं जीबन-पथ पर बाधा है,
साहस से होता कार्य स्वयं आधा है,
कर्मठता से सफलता स्वयं लजाये।
स्वाध्याय करो तो कठिन सरल बन जाये!!

संघर्षों की गति विषम, चिराहत संयम,
निश्चय से होंगे दूर स्वयं सारे भ्रम,
बन सको भगीरथ तो सुर सरि लहराये!
स्वाध्याय करो तो कठिन सरल बन जाये!!

श्वासों की गति को नियति रोक कब पायी,
संकली मन की चेरी है तरुणाई,
दृढ़ व्रत से निष्फल आशंका टकराये!
स्वाध्याय करो तो कठिन सरल बन जाये!!

२२३, राजेन्द्र नगर लखनऊ

मनुष्यों को चाहिये कि सदा यज्ञ का आरम्भ और समाप्ति को करें और संसार के जीवों को अत्यन्त सुख पहुँचावें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.६२**

आर्य जाति की महान् विभूति

तपोधन महाबलिदानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द महाराज

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के जन्मदिवस के अवसर पर यह विशेष लेख लिखा जा रहा है। आपके जीवन की एक-एक घटना अत्यन्त विलक्षण व प्रेरणाप्रद है। समझ नहीं आता कि कौनसी घटना छोड़ी जावे और कौन सी दी जावे। आप कोई सामान्य तपस्वी संन्यासी नहीं थे। आप युगों के पश्चात् जन्म लेने वाली एक पूजनीय विभूति थे। श्री पं. चमूपति जी आर्यसमाज में पं. गुरुदत्त जी सरीखे विचारक विद्वान् माने जाते थे। कई भाषाओं के सिद्धहस्त इस असाधारण विद्वान् विचारक और महाकवि ने एक बार श्री स्वामी जी का जीवन चरित्र लिखने का मन बनाया। तब आपने श्री स्वामी जी से अपने आरम्भिक काल की कुछ विशेष घटनायें बताने की विनती की तो आपने दृढ़तापूर्वक एक भी घटना बताने की पण्डित जी की प्रार्थना टाल दी।

सज्जनवृन्द किसी संन्यासी के जीवन की इससे बड़ी घटना क्या हो सकती है? मनुष्य के लिए नाम की भूख को जीतना सब से कठिन कार्य है। उपाध्याय जी कहा करते थे कि दाम (धन) और चाम (सन्तान) की इच्छा को जीतना इतना कठिन नहीं है। मुझे यह घटना दयानन्द मठ दीनानगर में पंजाबी के जाने माने आर्य कवि श्री अजीतसिंह 'किरती' ने बताई। आप ने तब पंजाबी कविता में स्वामी जी की जीवनी लिखने का मन बनाया था।

कई हुतात्माओं और सैकड़ों धर्मरक्षकों, जाति सेवकों तथा पूजनीय विद्वानों के जीवन पर पठनीय छोटे-बड़े जीवन चरित्र व लेख लिखने वाले इस पूजनीय साधु ने अपने जीवन की छोटी बड़ी न घटना कभी लिखी-बताई और न सुनाई।

मैं उनके जीवनकाल में ही लेखक के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त किये जा रहा था। किसी भी आर्य महापुरुष-समाजसेवी के जीवन विषयक तत्काल जानकारी दे दिया करते थे, परन्तु उनके अपने जीवन की किसी घटना की कभी चर्चा ही नहीं किया करते थे सो मैं पूछने का साहस क्या करता?

वे नये-नये उदीयमान लेखकों के जाने माने पारखी थे। सब को कोई नई परियोजना लिखने के लिये सुझाते रहते थे। मुझे भी ऋषि जीवन का एक विशेष कार्य सौंपकर आगे बढ़ाया।

वे ऐसे अखण्ड ब्रह्मचारी थे - सत्गुरू स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज इतिहास में वर्णित विरले पूज्य अखण्ड ब्रह्मचारियों में से एक थे। यहाँ उनके जीवन की केवल दो ऐसी घटनायें दी जाती हैं। एक बार भ्रमण करते हुए श्री स्वामी जी बठिण्डा से थोड़ी दूरी पर सड़के के किनारे एक गुरुद्वारा में रुक गये। जो श्रद्धालु प्रातः सायं वहाँ आते थे उनसे वार्तालाप करके कुछ उपदेश दे दिया करते थे। अपने आरम्भिक काल के गुरू यशस्वी वैद्य श्री पं. बिशनदास से प्राप्त वैद्यक के ज्ञान से सत्संगी स्त्री-पुरुषों को जड़ी बुटियाँ बताकर रोगमुक्त करते रहे। आपके वैद्यक के ज्ञान की वहाँ धूम मच गई।

एक दिन कड़कती धूप में दोपहर के समय दूर से एक युवा स्त्री गुरुद्वारे की ओर आती आपने देख ली। तब उस गुरुद्वारे में आप अकेले ही थे। आपने बहुत ऊँची आवाज में उसे कहा, "चली जा! तू यहाँ क्यों आ रही है? उसने दूर से ही उत्तर दे दिया, मैं औषधि लेने आई हूँ।"

इस पर स्वामी जी गर्जना करते हुए बोले, "चली जा! यह कोई जड़ी बूटी औषधि बताने का समय नहीं है।" परन्तु वह फिर न रुकी। गुरुद्वारे में आ गई। वहीं द्वार पर पूज्य मुनि महात्मा जी ने कड़क कर कहा, "सच

सच बता यहाँ इस समय क्यों आई है?'' उसको बताना पड़ा। वह स्त्री कामांध थी। उसने कहा, ''मैं आपके सन्तान प्राप्ति की इच्छा से आई हूँ।''

स्वामी जी ने कहा, ''न जाने मेरे वैद्यक के ज्ञान से कितने दु:खी रोगियों का भला होता। मैं तेरे कारण अभी वैद्यक छोड़ता हूँ, परन्तु ब्रह्मचर्य व्रत नहीं तोड़ सकता।'' स्वामी जी के जीवन की इस घटना का आर्यसमाज में अनेक आर्यपुरुषों को ज्ञान था, परन्तु वह गुरुद्वारा कहाँ है यह बताने वाला कोई न मिला। यह भी पता था कि यह पंजाब के मालवा क्षेत्र के एक ग्राम में है। एक लम्बे समय तक खोज करते-करते एक आर्यपुरुष से मालवा क्षेत्र में मुझे इस घटना की पूरी-पूरी प्रामाणिक जानकारी मिल गई। मैं श्री जितेन्द्र कुमार जी एडवोकेट के साथ उस क्षेत्र के गुरुद्वारे की यात्रा भी कर आया। स्वामी जी के जीवन चरित्र में सप्रमाण पूरी घटना दी गई है।

इसके साथ ही यह बताना लाभप्रद रहेगा कि श्री महाराज वैद्यों, हकीमों को वैद्यक तो यदा कदा पढ़ा दिया करते थे, परन्तु किसी रोगी को कभी दवाई नहीं सुझाते बताते थे। बड़े-बड़े दैनिक पत्रों में रोगों के विषय में तथा वैद्यक पर उनके लेख भी दैनिक प्रताप उर्दू में इन पंक्तियों के लेखक ने पढ़े हैं।

'परोपकारी' में पहले भी मैं एक से अधिक बार श्री महाराज के अटल ब्रह्मचर्य व्रत की यह घटना दे चुका हूँ। घटना तथा विषय की महत्ता के कारण इसे पुन: यहाँ पर दिया जाता है। हैदराबाद के आर्य सत्याग्रह की विजय के पश्चात् सत्याग्रह के फील्ड मार्शल श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज अपने आश्रम दीनानगर पहुँचे तो दूर-दूर से अनेक सज्जन आपके चरणस्पर्श करने, बधाई देने व आशीर्वाद प्राप्त करने पहुँचने लगे। एक दिन उसी क्षेत्र के किसी दूरस्थ स्थान से एक देवी भी इसी प्रयोजन से दयानन्द मठ में पहुँच गई। भक्तों से घिरे मुनि महात्मा ने उस देवी से पूछा, ''तुम यहाँ कैसे आई हो?''

उसने भक्तिभाव से कहा, ''आप देश, धर्म, जाति रक्षा के लिए एक क्रूर विधर्मी शासक से एक लम्बी लड़ाई में विजय प्राप्त करके लौटे हैं। मैं कुछ मिनट आपके चरण दबा कर, आशीर्वाद पाकर चली जाऊँगी।''

स्वामी जी ने उसे कहा, ''यह दयानन्द मठ है। यहाँ स्त्रियों से पाँव दबवाने की कुप्रथा नहीं। न मुझे इसकी आवश्यकता है।'' यह कहकर श्रद्धेय स्वामी जी सब भक्तों के सामन ही तत्काल अपना तख्तपोश छोड़कर मठ के बाग की ओर चले गये। उस स्त्री से कहा, ''मेरे तो दो ही पैर हैं। इस तख्तपोश के चार पाँव हैं। इन्हें जी भर कर दबा ले। यह कहकर आप वहाँ से चल दिये। दर्शकों बाल ब्रह्मचारी संन्यासी के दृढ़ अटूट ब्रह्मचर्य व्रत का अद्‌भुत प्रभाव पड़ा। वहाँ पर उस समय जो जन उपस्थित थे उन्हीं में से एक धर्मबन्धु ने मुझे यह संस्मरण सुनाया था। देशभर में लाखों साधु हैं। इनमें किसी के जीवन में कोई ऐसी घटना घटी पढ़ी व सुनी नहीं गई।''

हाँ! कई जाने माने गुरुओं को आचार दोष में जेल में दण्ड भोगते देखा जा सकता है।

वह पर्वत चलता आ रहा है- कुछ वर्ष पूर्व मैं महाराष्ट्र, कर्नाटक की प्रचार यात्रा पर था। जब मेरी यात्रा की समाप्ति का समय निकट आया तो कर्नाटक में कहीं स्वामी ब्रह्मदेव जी से भेंट हो गई। तब आपने मुझे अपना एक विशेष पुरुष जो सन् १९३८ में शोलापुर के ऐतिहासिक आर्य सम्मेलन में आया था, उससे भेंट हो गई। उसी सम्मेलन में आर्य सत्याग्रह हैदराबाद का आर्यसमाज ने निर्णय लिया। देशभर के दैनिक पत्रों में इस सम्मेलन के समाचारों की धूम थी। उस भाई ने बताया कि उड़पी में दूर-दूर से धर्मप्रेमी बन्धुओं ने आकर मुझसे शोलापुर आर्य महासम्मलेन के समाचार जानने के लिए पूछताछ की। एक प्रश्न तो हर एक ने पूछा, वहाँ विशेष किस-किस नेता महापुरुष के दर्शन किये?

उसने अपने संस्मरण सुनाते हुए कहा, ''वहाँ की एक विशेष घटना तो यह है कि महासम्मेलन में एक भीमकाय बाल ब्रह्मचारी संन्यासी महात्मा स्वामी

स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के दर्शन हुए। वह जब दूर से आते दिखाई देते थे तो ऐसे लगता था कि मानो कि पर्वत चलता हुआ आ रहा है।" यह कथन सुनकर हर कोई झूम उठता था। इस कथन का मुझ पर भी विशेष प्रभाव पड़ा। तब तक मेरे लौटने का समय हो चुका था। मैंने मन में यह निर्णय ले लिया कि पंजाब लौटकर फिर एक बार मैं उड़पी उस बन्धु से मिलने शीघ्र जाऊँगा। उसे कहूँगा कि मुझे एक बार अपने शब्दों में यह घटना सुनाओ। इसे उसके मुख से सुने बिना मुझे चैन नहीं पड़ रहा था। मैं पंजाब लौटकर कुछ ही सप्ताह में उड़पी की यात्रा पर निकला। उड़पी पहुँचकर उस आर्य बन्धु के घर जा कर उसे मिला। वह स्वाध्यायशील आर्य बन्धु नाम से मुझे जानता था।

वह मेरे उड़पी आने का प्रयोजन सुनकर दंग रह गया। उसने भावभरत हृदय से तब मुझे सुनाया, "स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी जब शोलापुर में दूर से आते दिखाई देते थे तो हमें ऐसा लगता था कि मानो पर्वत चलता आ रहा था।" ब्रह्मचर्य तेज बल की तो अपनी ही निराली शान है। मेरी आयु इस समय ९४ वर्ष पूरी होने वाली है। मैंने इस दीर्घ जीवन में किसी भी बड़े छोटे ब्रह्मचारी की चाल पर ऐसा वाक्य बोलते किसी भी दर्शक को नहीं सुना।

सचमुच हमारे पूजनीय स्वामी जी अपने तप तेज व भीमकाय शरीर के कारण अपना उदाहरण आप ही थे। अब सत्ताधारी राजनेताओं के बिना आर्यसमाज के विशेष समारोह कहाँ होते हैं? उपरोक्त वर्णित अद्‌भुत घटना जैसे प्रसंग कौन सुनाता है? जैसे यह सेवक श्रद्धा से भरपूर हृदय लेकर इतनी दूर इतना किराया भाड़ा खर्च करके उड़पी पूज्य स्वामी जी के तप तेज व भीमकाय शरीर की महिमा विषयक एक वाक्य सुनने गया ऐसी कोई घटना अब सुनने सुनाने को क्यों नहीं मिलती? देश को अनुप्राणित करने को समाज में ऐसा इतिहास सुनता, सुनाता तथा लिखता भी कौन है?

यह किस से सीखा है?- एक बार श्री स्वामी जी गाड़ी में सवार होकर हरियाणा प्रदेश से कहीं जा रहे थे। यह देश विभाजन से पहले की घटना है। उस डिब्बे में बहुत भीड़ थी। हिन्दू व मुसलमान दोनों प्रकार के यात्री थे। कुछ ग्रामीण यात्री घर से ही भोजन के एक ग्रामीण किसान यात्री का भोजन एक कपड़े में बंधा देखा तो उसने जानबूझकर उसे छू दिया।

इससे रेल में एक विवाद खड़ा हो गया। कुछ हिन्दू यात्रियों ने तो कह दिया कि इसके छूने से यह अब अपवित्र भ्रष्ट हो गया। यह खाने योग्य नहीं रहा। कुछ यात्रियों ने विवाद निपटाने के लिये कहा, "छूने वाला मुसलमान उस ग्रामीण किसान को एक रुपया दण्ड स्वरूप देवे। उसको यह पंचायती निर्णय मानना पड़ा। उसने कृषक को एक रुपया देकर कहा, अब वह भोजन मुझे दे दे। मैं खाऊँगा।"

उसने झट से वही भोजन खाना आरम्भ कर दिया। मुसलमान ने कहा, फिर मुझसे एक रुपया क्यों लिया? तब किसान ने कहा, तूने निष्प्रयोजन मेरे भोजन को क्यों छेड़ा? यह उसका दण्ड है।

उसी डिब्बे में थोड़ी दूर पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज बैठे-बैठे यह देख रहे थे। उस किसान से पूछा, "चौधरी तूने यह किससे? कहाँ से सीखा?"

तपाक से वह किसान बोल पड़ा, महाराज आप से।

स्वामी जी उसे नहीं जानते थे, वह तो आर्यसमाजी था। श्री स्वामी जी को खूब जानता था। यह घटना मैंने रिफार्मर उर्दू साप्ताहिक में स्वामी जी के लेख में पढ़ी थी। स्वामी जी महाराज के पास ऐसी सैंकड़ों नहीं सहस्रों शिक्षाप्रद प्रेरक सच्ची घटनायें थीं। हम लोगों ने भूल की जो सब सुरक्षित न की गईं।

उनका सब ओर सब पर ध्यान रहता था- श्री स्वामी जी महाराज का सब ओर सभी समाज सेवकों पर ध्यान रहता था। अपनी ऐसी सोच तथा व्यवहार के कारण आपने देश भर में नये-नये उत्साही तथा समर्पित समाज सेवकों का निर्माण किया। जन्म की जातपात के

कारण कटे फटे समाज के प्रत्येक वर्ग से आपने जी जान से सोत्साह श्रद्धा भक्ति से समाज सेवा करने वाले आर्यवीरों का निर्माण किया। रामाँमण्डी (पंजाब) आपका ऐसा पहला बड़ा केन्द्र था। वहां दलित, जाट, ब्राह्मण, अग्रवाल आदि प्रत्येक वर्ग से आपने तन, मन, धन से जी जान से समाज सेवा में जीवन जुटाने वाले रणबांकुरे आर्यपुरुष आपने समाज को दिये।

उनकी सोच और व्यवहार कैसा था? इसका एक उदाहरण यहाँ देना हितकर लाभप्रद होगा। सन् १९५३-५४ की घटना है कि मिर्ज़ाई पत्रिका बदर में आर्यसमाज के विरुद्ध एक विषैला लेख छपा। आर्यसमाज के मन्त्री श्री देसराज जी ने मुझे आज्ञा दी कि जब पं. त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री घर अवकाश पर आयें तो उन्हें कहना कि वह इस लेख का मुँह तोड़ उत्तर दें।

मैंने पण्डित जी को आने पर मन्त्री जी का सन्देश सुना दिया। तब तक मेरे लेख भी निरन्तर नियमपूर्वक छपते रहते थे। मिर्ज़ाई मत का मेरा भी अच्छा व ठोस अध्ययन था। पण्डित जी ने अत्यन्त प्रेम से मुझे कहा, ''अब सारा जीवन हमीं लोगों ने विरोधियों को उत्तर देना है? अब आप उत्तर देने व लिखने में समर्थ हैं। अब आपको ऐसे सब काज करने हैं।'' ऐसे वाक्य कहकर आपने मुझे उत्तर देने के लिए प्रोत्साहित कर दिया।

मैंने अत्यन्त जोशीली भाषा में मिर्ज़ाई साहित्य के प्रमाणों से आर्यवीर साप्ताहिक उर्दू पत्र में एक लेखमाला देकर उस आक्रमण का उत्तर प्रत्युत्तर देकर मिर्ज़ाई पत्र की बोलती बन्द कर दी। आर्य जगत् में मेरी लेखमाला ने धूम मचा दी। आर्यसमाज रायकोट (लुधियाना) के उत्सव पर सात आठ उपदेशक महानुभाव अपने कार्यक्रम निपटाकर रिक्त समय में मेरी लेखमाला की चर्चा छेड़े बैठे थे। सबने जी भर कर लेखमाला की प्रशंसा की।

श्री स्वामी जी भी पास बैठे चुपचाप सबकी प्रतिक्रिया सुनकर यह बोले, ''यह तो सबको मानना पड़ेगा कि आर्यसमाज की और ऋषि दयानन्द जी की निन्दा में यदि कोई बोलेगा या लिखेगा तो राजेन्द्र जिज्ञासु चुप करके नहीं बैठेगा। यह उसका उपयुक्त उत्तर देकर विरोधी को चुप करवाकर ही चेन लेगा।''

श्री ओम्प्रकाश वर्मा जी ने पूज्य स्वामी जी की यह प्रतिक्रिया मुझे भी सुना दी। इतने उपदेशकों के सामने कहे गये महाराज के ये शब्द दूर-दूर पहुँच गये। कार्यक्षेत्र में नये-नये उतरे साहित्य सेवी पर स्वामी जी द्वारा पीठ थपथपाने, आशीर्वाद देने का मुझ पर क्या प्रभाव पड़ा? यह आज बताने की आवश्यकता नहीं। मैं आज जहां खड़ा हूँ यह उस मुनि महात्मा के इन शब्दों व आशीर्वाद का ही फल है। ठीक है तब महाशय कृष्ण जी, पं. नरेन्द्र जी, पूज्य उपाध्याय जी और महात्मा आनन्द स्वामी जी सभी मुझसे प्यार करते व प्रोत्साहन दिया करते थे, परन्तु स्वामी जी महाराज देश की सीमा पर बैठे एक अनुभवहीन युवक को जो उभारा तो यह इसी का परिणाम था कि डॉ. धर्मवीर युग में निरन्तर तीस चालीस वर्ष तक यह लेखक परोपकारी के प्रत्येक अंक में 'कुछ तड़प-कुछ झड़प' शीर्षक से अन्य-अन्य मत पन्थों के उत्तर देता रहा। धर्मवीर जी ने अन्य मतों की पुस्तकों के उत्तर में भी मुझसे 'इतिहास की साक्षी' आदि पुस्तकें लिखवाईं। मेरे द्वारा लिखित 'मैक्समूलर का एक्सरे' इस युग की आर्यसमाज की एक अनुपम पुस्तक है। धर्मवीर जी ने रांची के एक ईसाई पत्र को मेरा लेख छापने के लिए सफल दबाव बनाया।

वर्तमान युग में और कौन आर्य साहित्यकार है जो गत पचास वर्षों से लगातार मत पन्थों से टक्कर लेता चला आ रहा है। डॉ. शहरयार नाम के एक मुस्लिम स्कॉलर के एक ग्रन्थ का निष्कर्ष जो आर्यसमाज के विरुद्ध था, बदलवाकर आर्यसमाज की प्रशंसा उसमें छपवा दी।

इसका सब श्रेय सतगुरू स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी आदि हमारे पूज्य महापुरुषों विद्वानों के आशीर्वाद को ही दिया जाना चाहिए।

वेद सदन, नई सूरज नगरी, अबोहर, पंजाब

'योगः कर्मसु कौशलम्'

श्री रामनिवास 'गुणग्राहक'

बिना किसी सन्देह और विवाद के यह घोषणा की जा सकती है कि यह एक वाक्य सम्पूर्ण गीता का सार तत्त्व कहा जा सकता है। जिस श्लोक का यह चौथा चरण है वह श्लोक भी एक बार देख और समझ लेना चाहिए। '**बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतः दुष्कृते। तस्मात् योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्।।**' (२.५०) श्रीकृष्ण इस श्लोक के द्वारा अर्जुन को समझा रहे हैं कि बुद्धि के द्वारा अच्छे व बुरे दिखने वाले कर्मों के प्रति अपनेपन के भावों को समाप्त कर दो। इसके लिए योग से युक्त होकर कर्म करो। योग की परिभाषा देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं- अर्जुन! कर्म की कुशलता ही योग है। सम्पूर्ण गीता ही नहीं सारा ज्ञान-विज्ञान सारे धर्म-उपदेश, सारी शिक्षाएँ केवल 'योगः कर्मसु कौशलम्' को सफल और सार्थक करने के लिए ही हैं। क्या है यह 'कर्म कुशलता?' कैसे प्राप्त की जा सकती है- 'कर्म कुशलता?' क्या लाभ है- 'कर्म कुशलता का?' ये तीन प्रश्न ही हमारे विचार और चिन्तन-मनन के मुख्य बिन्दु रहेंगे। इनके उत्तर जितने सरल ढंग से सफलतापूर्वक समझे-समझाये जा सकें तो समझो समझने-समझाने वाले दोनों का जीवन धन्य हो गया।

यह कहने और मानने में किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि वेद हमारी सत्य सनातन वैदिक संस्कृति के मूल स्रोत हैं। संसार का समग्र ज्ञान-विज्ञान वेदों से ही विस्तार को प्राप्त होकर धरती तल पर फैला है। यजुर्वेद में आता है-

''युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।''

अर्थात् ज्ञानी, विद्वान् महान् परमेश्वर में अपने मन और बुद्धि की वृत्तियों को युक्त करते हैं। चूंकि मानव-जीवन का सर्वोपरि लक्ष्य है परमानन्दमय परमात्मा की प्राप्ति। इसीलिये हमारे तत्त्ववेता ऋषि कहते हैं- ''अयं तु परमो धर्मः यत् योगेन् आत्मदर्शनम्'' अर्थात् योग के द्वारा आत्मा परमात्मा का साक्षात् दर्शन कर लेना ही परम धर्म है। परमात्मा-प्राप्ति के लिए सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रन्थ योगदर्शन के प्रणेता महर्षि पतञ्जलि जी महाराज हाँ योग का स्वरूप बताते हैं, वहीं इसका फल परमात्मा की प्राप्ति प्रकट करते हैं। '**योगत्तनिचवृत्ति निरोधः**' के बाद दूसरा ही सूत्र है '**तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्**'- अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध होने पर सबके द्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा की स्थिति होती है। योग की बड़ी सुन्दर और योग के विविध आयामों, विविध पक्षें को स्पष्ट करने वाली परिभाषा कठोपनिषद् के ऋषि प्रकट करते हैं-

**'तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रियधारणाम्।
अप्रमत्तस्तदा भवति योगो हि प्रभवाप्ययौ।।'**

अर्थात् विद्वान् लोग उस स्थिति (अवस्था) को योग मानते हैं, जहाँ इन्द्रियाँ स्थिर हो जाती हैं, योगी आलस्य-प्रमाद से मुक्त हो जाता है। शुभ संस्कारों की उत्पत्ति और अशुभ संस्कारों के नाश का नाम योग है।

अब हम गीता के योग पर चर्चा करें- श्रीकृष्ण कर्मों की कुशलता को योग बताते हैं। कर्म के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण की घोषणा है-

'नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।'

अर्थात् मनुष्य जीवन में एक क्षण भी बिना कर्म किये नहीं रहता। भाव सीधा है कि वह प्रतिक्षण कर्म करता रहता है, चाहे वह कर्म शारीरिक हो, वाणी का हो या मन का। ऋग्वेद मन्त्र - १.६७.३ का भाष्य करते हुए महर्षि दयानन्द लिखते हैं- कोई मनुष्य कर्म के बिना क्षण भर भी स्थित नहीं हो सकता। जबकि वेद और गीता एक स्वर से कहते हैं कि मनुष्य निरन्तर प्रतिक्षण कर्म करता रहता है, ऐसे में श्रीकृष्ण के 'योगः कर्मसु कौशलम्' की महत्ता और भी बढ़ जाती है। हम प्रतिक्षण कर्म कर रहे हैं तो हमारी कर्म कुशलता भी निरन्तर बनी रहनी चाहिए। निरन्तर वही चीज बनी रहती है जो हमारे

स्वभाव का अंग बन जाए। कर्म कुशलता को स्वभाव का अंग बना लेने की प्रेरणा देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं-

'सदृशे चेष्टते स्वस्या, प्रकृते ज्ञानवानपि।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति।।'

(३.३३) अर्थात् ज्ञानवान् लोग भी अपने स्वभाव के अनुसार ही कार्य करते हैं, सामान्य मनुष्य (प्राणी) भी अपने स्वभाव के अनुसार ही चलते हैं इसलिए स्वभाव को ही उत्तम बनाओ, थोड़ी देर की रोकथाम से काम नहीं चलता। हमारे द्वारा जाने-अनजाने में शारीरिक, वाचिक और मानसिक स्तर पर सतत होने वाले कर्मों को सावधान, सचेत होकर विवेकपूर्ण ढंग से, शास्त्रोक्त रीति से, धर्म-अधर्म, सत्य-असत्य, पाप-पुण्य, उचित-अनुचित, शुभ-अशुभ की कसौटी पर परख कर कर्त्तव्य भाव से करना ही सच्चे अर्थों में 'कर्म कुशलता' है। इसके लिए अपने मन बुद्धि को स्वाभाविक रूप से सजग, श्रेष्ठ व सन्तुलित बनाये रखना पहली आवश्यकता है।

मन, बुद्धि व इन्द्रियों की श्रेष्ठता, पवित्रता व परस्पर सन्तुलन बनाकर श्रेष्ठ कर्म करते रहने का स्वभाव बनाना जितना आवश्यक है उतना ही आवश्यक है अच्छे-बुरे कर्मों का सच्चा ज्ञान होना। श्रीकृष्ण जी की भाषा में कहें तो- 'गहना कर्मोणा गतिः' कर्मों की गति बड़ी गहन गम्भीर है।'**किं कर्म किं अकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः**' क्या करना चाहिए क्या नहीं करना चाहिए इसे लेकर बड़े-बड़े क्रान्तदर्शी भी भ्रमित हो जाते हैं। महाकवि भास लिखते हैं- '**कर्त्तारः सुलभा लोके विज्ञातारस्तु दुर्लभाः**' (स्वप्न ४.९) संसार में कर्म करने वाले तो सर्वत्र सुलभ हैं, सब करते ही हैं, लेकिन ज्ञान-विवेकपूर्वक कर्म करने वाले बहुत दुर्लभ हैं।इसीलिये श्रीकृष्ण कहते हैं- '**कर्मणो ह्यपि बोधव्यं बोधव्यं च विकर्मणः**' (४.१७) क्या करने योग्य है औ क्या न करने योग्य है, इसे भलीभाँति जान लेना चाहिए। अर्जुन के समाने यही समस्या थी, वह अपने न्याय स्थापना के क्षत्रिय-कर्त्तव्य की अनदेखी करके स्वजन मोह में पड़कर युद्ध से विमुख हो रहा था कर्म रहस्य को समझाते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं- 'स्वभावनियतं कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बिषम्' (१८.४७) हमारा स्वभाव (आत्म-चेतना) जो नियत करे उस कर्म को करने से हमें पाप नहीं लगता। इसी बात को महर्षि मनु के शब्दों में- 'स्वस्य च प्रियमात्मनः' और महर्षि व्यास के शब्दों में-'आत्मनः प्रतिकूलानि परेशां न समाचरेत्' कहकर धर्म और धर्म-सर्वस्व कहा गया है। कई बार हमें अर्जुन की तरह जब लोभ-लालच, हठ-दुराग्रह व काम, क्रोध, मोह घेर लेते हैं तो हमें कर्त्तव्य कर्म में हानि दिखती है और अकर्त्तव्य करने में प्रवृत्त हो जाते है। ऐसा अज्ञान के कारण होता है। इससे बचने के लिए श्रीकृष्ण कहते हैं- 'ज्ञानाग्नि सर्व कर्माणि भस्मसात् कुरुतेऽर्जुनः' हे अर्जुन ज्ञान की अग्नि में डालकर इस कर्म-भ्रान्ति को नष्ट कर डाल। कर्म-रहस्य को भलीभाँति जानने के लिए प्रभु की वेदवाणी का मनोयोग से स्वाध्याय करना चाहिए। महर्षि मनु कहते हैं- '**वेदप्रतिपादितो धर्मः अधर्मस्तद् विपर्ययः।**' अर्थात् जो वेद कहते हैं वह धर्म है, इसके विपरीत अधर्म है।

'कर्म कुशलता' का मूल आधार मन, बुद्धि व इन्द्रियों की पवित्रता है, स्वभाव को श्रेष्ठ बनाना ही है। इसके लिए हम श्रीकृष्ण द्वारा बताये हुए गीता में वर्णित उपाय की चर्चा करना अधिक उचित मानते हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं- 'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रंमिह विद्यते' अर्थात् ज्ञान के समान हमारे जीवन को पवित्र करने वाला कुछ भी नहीं। महर्षि मनु भी ऐसा ही मानते हैं-

'अद्भिर्गात्राणिशुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्या तपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।।'

(५.१०९) शरीर जल से शुद्ध होता है मन सत्याचरण से शुद्ध होता है, विद्या और तप से आत्मा के मल नष्ट होते हैं और बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है। इस प्रकार निरन्तर सत्य का आचरण करें, विद्या-पुस्तकों, वेद आदि शास्त्रों का पठन-पाठन करते हुए तपस्वी जीवन जियें, तप के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं- अपने कर्त्तव्य कर्मों का पालन करते हुए जो व्यक्ति सर्दी-गर्मी, भय-प्रेम, सफलता-असफलता की चिन्ता हीं करता, कर्त्तव्य पालन में लगा ही रहता है श्रीकृष्ण की दृष्टि में

वही सच्चा तपस्वी है। बुद्धि की पवित्रता के लिए ज्ञानार्जन करते रहना चाहिए।

प्रश्न शेष है- 'कर्म कौशल' क्यों? श्रीकृष्ण द्वारा गीता में वर्णित कर्म कौशल हमारे सर्वदु:खों की अमोघ औषधि है। ध्यान रहे हमारी सत्य सनातन वैदिक संस्कृति में जीवात्मा की विभिन्न योनियों के माध्यम से चलने वाली यात्रा का पूर्ण पड़ाव परमात्मा की आनन्दमयी गोद-मोक्ष में ही है। वहाँ तक पहुंचने के लिए नरतन में किये जाने वाला योगाभ्यास ही है। महर्षि याज्ञवल्क्य शतपथ ब्राह्मण में लिखते हैं- '**भवतापेन तप्तानां योगो हि परमौषधम्**' अर्थात् संसार के दु:खों की परमौषधि योग है। इतना ही नहीं शरीर शास्त्र (आयुर्वेद) के महाज्ञानी महर्षि चरक भी यही मानते हैं- 'योगे मोक्षे च सर्वासां वेदनानामर्वतनम्' अर्थात् योग द्वारा मोक्ष पाकर ही सब दु:ख सब वेदनाएँ समाप्त होती हैं। गीता के शब्दों में कहें तो बड़ा प्रसिद्ध श्लोक है-

'युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा।।'

(६.१७) यहाँ कर्म कुशलता के विविध पक्ष बताते हुए कहा है- आहार-विहार से लेकर सोने-जागने तक, जीवन के हर कर्म, हर चेष्टा में जो उपयुक्तता है, अनुकूलता है, नियमबद्धता है, उनका ही योग है, और वही दु:खों को नष्ट करनेवाला है। गीता में श्रीकृष्ण द्वारा युद्ध क्षेत्र में दी गई योग की व्यावहारिक-लौकिक परिभाषा (योग: कर्मसु कौशलम्) ही पारलौकिक परिभाषा- 'युञ्जते मन उत युञ्जते धियो.' के लिए धरातल प्रदान करती है। जो लोक व्यवहार मे कर्मकुशलता रूपी योग विद्या का पालन नहीं करता, वह योग दर्शन प्रणीत समाधि प्राप्त कराने वाली योग विद्या का अधिकारी भी नहीं बन पाता। दूसरे सरल शब्दों में कहें तो आष्टांग योग के प्रथम दो अंग यम-नियम जो कि हमारे लोक-व्यवहार से सीधा सम्बन्ध रखते हैं, उन्हीं को योगिराज श्रीकृष्ण ने लोक कर्त्तव्य से, न्याय की स्थापना से विमुख होते अर्जुन को गीतोपदेश के माध्यम से समझाया ऋग्वेद में इस तथ्य को बड़े सुन्दर ढंग से सुस्थापित किया है- '**तेन सत्येन मनसा दीध्याना: स्वेन युक्तास: क्रतुना वहन्ति।**' (७.९०५) वे मनुष्य ही सच्चे मन से परमात्मा का ध्यान कर सकते हैं, जो अपने कर्त्तव्य कर्मों का युक्तिपूर्वक निष्ठा से वहन करते हैं, पालन करते हैं।

'योग: कर्मसु कौशलम्' मेंश्रीकृष्ण का ऐसा विद्युत वचन है कि यह जिस व्यक्ति के मन-मस्तिष्क से प्रवाहित होता हुआ उसके हृदय को छू जाए तो उसके रोम-रोम में कर्त्तव्यभाव और आत्मबल का ऐसा मणि-कांचन सुयोग बने कि वह एक नहीं सैकड़ों महाभारतों का विजेता बन सकता है। कर्म रहस्य की गृढ ग्रन्थियों को सहज भाव से खोल देने की बौद्धिक क्षमता पाकर, अपने कर्त्तव्य कर्मों के पालन में कर्त्तापन से नहीं-कर्त्तव्य भाव से प्रवृत्त होकर मनुष्य जीवन में जो कुछ भी करता है उसके सब कर्म प्रभु-भक्ति के उपकरण बन जाते हैं। ऐसे ही कर्मों के लिए श्रीकृष्ण कहते हैं- '**स्व कर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानव:**' (१८.४६) अपने कर्मों से ईश्वर की अर्चना करता हुआ मनुष्य अपने जीवन को सफल बना लेता है। 'योग: कर्मसुकौशलम्' का चमत्कार देखिये जो अर्जुन-

'गाण्डीवं संस्रते हस्तात् त्वक् चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्वस्था तुं भ्रमतीव च ने मन:।।'

(१.३०) की दुहाई दे रहा था। वही अर्जुन- 'योग: कर्मसु कौशलम्' के विज्ञान को जानकर कह उठता है-

''नष्टो मोह: स्मृति: लब्धा त्वत् प्रसादात् भयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गत सन्देह: करिष्ये वचनं तव।।''

(१८.७६)

हे अच्युत। मेरा मोह नष्ट हो गया है आपकी कृपा से मेरी कर्त्तव्य-बुद्धि मुझे प्राप्त हो गई है। अब मेरे सारे सन्देह दूर हो गये हैं, अब मैं आपके वचनों का पालन करूँगा। ये चमत्कार है- '**योग: कर्मसु कौशलम्**' का। आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय जन मानस में श्रीकृष्ण के इस- '**योग: कर्मसु कौशलम्**' का सही अर्थों में सही व्यक्तियों द्वारा व्यापक प्रचार-प्रसार हो। ऐसा हो सकता तो सबका जीवन धन्य हो जाएगा।

गाँव - सूरौता, भरतपुर (राज.)

उर्दू से अनूदित-

अन्त:वेदना
आर्यसमाज कहां है? और हम कहां खड़े हैं?

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

खाना खा रहा था कि सेवक ने एक कार्ड व एक हिन्दी पत्रिका का एक अंक रख दिया। कार्ड था श्री भाई बाबूराम गुप्त लुधियाना निवासी का। इसे मैं बिना किसी कांट-छांट के पाठकों की भेंट करता हूं।

मान्यवर श्री उपाध्याय जी, सादर नमस्ते।

गत दिनों आपके स्वास्थ्य सम्बन्धी समाचार जानकर चिन्ता हुई थी, परन्तु रिफ़ार्मर के नवीन लेख 'मुयदा बेमिसाल' (अद्वितीय शुभ समाचार) पढ़कर हर्ष हुआ। बर्मी भाषा में सत्यार्थप्रकाश के लिए आपको बधाई। अन्तत: आपका प्रयत्न सफल हुआ, परन्तु भारत में आर्यसमाज के प्रचार की स्थिति सन्तोषजनक नहीं। यह आपने अपने एक लेख में लिखते हुए लिखा था, यदि स्वामी श्रद्धानन्द होते तो इस न्यूनता का अवश्य उपचार करते।

सचमुच बाहर के देशों में भी (धर्म प्रचार की) आवश्यकता है, परन्तु भारत में इससे कोई थोड़ी आवश्यकता नहीं। एक उदाहरण गत दिनों मुझे आर्य गर्ल्स स्कूल के प्रबन्धक के रूप में अध्यापिका पद के लिए प्रत्याशी बी.ए., बी.टी. देवियों में से मैंने एक देवी से पूछा, सत्यार्थप्रकाश: हिन्दी की एक पुस्तक है। क्या आप उसके लेखक का नाम और उनके द्वारा किये गये कार्यों के सम्बन्ध में कुछ जानती हैं? देवी के मौन पर उसके साथ आई माता ने अभी 'स्वामी' इतना ही कहा था कि मैंने उनको रोक कर कहा, मैं आप से नहीं, बहिन जी से पूछ रहा हूं। यह अवस्था है इतना पढ़े लिखे लोगों की। पंजाब के शिक्षामन्त्री यहां आए तो मैंने उनसे यह चर्चा की तो कहने लगे कि अब हम प्रयत्न कर रहे हैं कि सभी महापुरुषों के जीवन व कार्यों के सम्बन्ध में (विद्यार्थी) जानें। ऐसी पुस्तकें पढ़ाई जायें। मैंने एक बन्धु की सहायता के लिए कुछ रुपये भेजे। वे क्षय रोग से रुग्ण है। उसे गायत्री मन्त्र का जप करने के लिए लिखा। स्वामी दयानन्द ने इसकी महिमा लिखी है। उत्तर में धन्यवाद के साथ लिखा आया, स्वामी दयानन्द आपकी प्रतिष्ठा बढ़ायें । स्वामी दयानन्द आपके काम धन्धे को उन्नति दें। आपके परिवार बाल बच्चों को प्रसन्न रखें। इत्यादि।

इस प्रकार इस व्यक्ति को यह पता ही नहीं कि स्वामी दयानन्द कौन हैं। यह सब हमारे लिये लज्जाजनक है। हम दो दिन उत्सव के धूम धड़ाके से प्रसन्न हो जाते हैं, परन्तु आर्यसमाज कहां है? और हम कहां खड़े हैं? यह स्पष्ट है।

कृपा बनाये रखें ।

बाबूराम गुप्त

सर्वप्रथम मैं उन बन्धुओं का आभार प्रकट करता हूं जो मेरे स्वास्थ्य के बारे में इतने चिन्तित रहते हैं। सहानुभूति के पत्र तो आते ही हैं। कई मित्र सविस्तार मेरे स्वास्थ्य के बारे में पूछते रहते हैं। वे अपने समुचित सुझाव भी लिखते हैं। श्री महाशय नारायण बी.ए. उनमें से एक हैं जिनके दो विस्तृत पत्रों में बहुत रोचक व विचारणीय बातें दी हुई हैं। मैं ठीक हूं। न्यून अति न्यून इतना ठीक हूं कि चिन्ताजनक बात नहीं है। हाँ, इतनी बात अवश्य है कि सेवाएँ देने योग्य नहीं हूं।

मृत्यु के बारे में वृद्धों की सोच

मैंने एक बार एक उपन्यास पढ़ा था कि वृद्ध पुरुष को अपनी मृत्यु के सम्बन्ध में इतना विश्वास नहीं रहता। वह समझता है कि यदि एक सहस्र मास से मैं सुरक्षित हूं

तो आगे भी ऐसा ही रहेगा। मैं भी कुछ ऐसा ही सोचने लगा हूँ-

मौत आती है, देख जाती है,
देखकर पीछे लौट जाती है।
गोया मुल्के अदम में मेरे नाम,
मुन्तिखिन हो न सका कोई मकाम।।

चलिये! यह तो बात में से वैसे ही बात निकल आई। श्री बाबूराम जी का पत्र पढ़कर मैंने पत्रिका को खोला तो उसमें एक बहुत लम्बा लेख लगभग ऐसी ही निराशा से भरा दृष्टिगोचर हुआ। यह विस्तार से था। इसमें घटनाओं के साथ-साथ व्यक्तिगत बातों की भी चर्चा थी। इसमें यदि किन्हीं व्यक्तियों की ओर अंगुली न उठाई होती तो उसका नाम भी पाठकों को बतला देता, परन्तु मुझे न तो किसी से व्यक्तिगत द्वेष है, न शिकायत। मुझ पर सब की कृपा बनी रहती है। हां, उनकी निराशा में कभी-कभी भागीदार हो जाता हूं। वह भी इसलिए कि सम्भवत: कुछ अधिक आशाएं लगा रखी थीं। निराशा भी आशा के अनुपात से ही होती है। जिसे आशा नहीं वह निराश नहीं। पत्रिका में छपा है, "आर्यसमाज को जगाने और सजाने की तुरन्त आवश्यकता है अन्यथा वर्तमान ढांचा महर्षि की भावना एवं कल्पना की जड़ें खोद देगा। इसकी रक्षा के लिए इसके ढांचा में आमूलचूल परिवर्तन करना होगा। वर्तमान ढांचा में गाड़ी के पीछे घोड़ा जोतने की व्यवस्था है। इसे एकदम उलटने की आवश्यकता है। जिस धार्मिक ढांचे में धर्म के मर्मज्ञ धर्मात्माओं के लिए कोई स्थान न हो। वोट बटोर सांसारिक लोगों के हाथ में सारी सत्ता हो। ऐसा ढांचा धर्म-मार्ग पर अधिक दिन खड़ा नहीं रह सकता। इस दृष्टि से संसार की अच्छी बुरी सभी संस्थाएँ आर्यसमाज की अपेक्षा अधिक अच्छी स्थिति में हैं। यदि हमें आर्यसमाज को जीवित रखना है तो हमें आर्यसमाज के ढांचा को ऐसा बनाना होगा जिस में त्यागी, तपस्वी, स्वार्थ रहित सच्चे मिशनरियों का मान्य व नेतृत्व हो। दुराचारियों, स्वार्थियों और गुटबन्दियों का नहीं।"

सुयोग्य लेखक ने एक इलाज भी बताया है कि दयानन्द सेवा-आश्रम के नाम से एक नया संगठन गठित किया जाये इत्यादि। जो रोग मेरे सुयोग्य मित्र ने बताया है, वह ठीक है और ऋषियों मुनियों की उस पर मुहर है।

सब महापुरुषों का कथन है कि स्वार्थ से देश व जाति दोनों का विनाश होता है तथा निस्वार्थ सेवा जातियों व समाजों की सुदृढ़ता का कारण होती है। परन्तु जो निदान यहां किया गया है, वह तो सब पार्टियाँ करती हैं। प्रत्येक दल की दृष्टि में उसके व्यक्ति सत्यनिष्ठ, स्वार्थरहित, परोपकारी हैं तथा उनके विरोधी दनुजता का मूर्तस्वरूप हैं। जब ऐसी स्थिति हो तो नया संगठन क्या करेगा? उसके लिए व्यक्ति कहां से आयेंगे? और क्या गारण्टी है कि इसी प्रकार के व्यक्ति उस संगठन में प्रवेश न पा सकेंगे? इसलिए यद्यपि मैं शिकायत करने से पीछे नहीं और नये संगठनों के लिए शीघ्रता से तैयार नहीं होता, परन्तु यह कहने में संकोच नहीं कि आर्यसमाज के व्यवहार में सैकड़ों दुर्बलताएँ हैं, परन्तु आर्यसमाज के ढांचे में नहीं। क्या हम आर्यसमाज के नियमों को बदलना चाहते हैं? क्या हम साधारण जनता की प्रबन्ध में भागीदारी नहीं चाहते? उपनियमों को हम कई बार बदल चुके हैं, परन्तु कोई अधिक लाभ तो हुआ नहीं।

भारत की वर्तमान राजनीति की परिधि में मैं देखता हूं कि जब कभी कोई दोष दिखाई देता है तो एक नया दल खड़ा हो जाता है, परन्तु जब वह नया दल कार्य करना आरम्भ करता है अथवा सत्ता प्राप्त करने लगता है तो उसके कामकाज कुछ अधिक भिन्न नहीं होते। हाँ! कुछ दिनों के लिए कुछ क्षेत्रों में आशा की झलक दिखाई देने लगती है। साथ के साथ धोखा हो जाता है।

'हर कि आमद अमारते नौ साख़त'

अर्थात् जो कोई भी आया उसने नये भवन का निर्माण कर दिया। नई-नई पार्टियां बनाना दलों की दलदल को बढ़ाना है। अत: जब मैं सुनता हूं कि अमुक स्थान पर

नया दल गठित हो गया तो मुझे अच्छा नहीं लगता। प्राय: करके पार्टी बदलने का यह अर्थ नहीं कि व्यवहार में सुधार हो गया। केवल लीडर बदल गये। उसकी मनोवृत्ति तो वही है। जो पत्थर दो टुकड़ों को तीन या चार कर सकता है, वह गूंद (जोड़ने) का काम नहीं करता। अत: आवश्यकता है गूंद की खोज करने की जो फटे हुए पृष्ठों को जोड़ दे।

तू बराय वसल करदन आमदी।
नै बराय फसल करदन आमदी।।

अर्थात् तू मिलाने के लिए जन्मा है। तू फोड़ने तोड़ने के लिए नहीं आया।

महाभारत में कौन धर्म पर था?-

आर्यसमाज में मुझे इस बात की न्यूनता दिखाई देती है। बाईबिल के कथनानुसार हम दूसरे की आंख का तिनका तो देखते हैं परन्तु अपनी आंख का शहतीर नहीं देखते, परन्तु चाहे हम इस शहतीर को न भी देखें परन्तु इसे छुपा तो नहीं सकते। जब एक दूसरा दल बन जाता है तो **'यक न शुद दो शुद', 'दो न शुद सिह शुद', 'सिह न शुद चहार शुद'** की कहावत चरितार्थ होती है। नई पार्टी समझती है अथवा उसके नेता दूसरों को समझाते हैं कि हम जो मुद्रा ढालेंगे उनमें विशुद्ध स्वर्ण होगा, क्योंकि हमने एक नया ढांचा तैयार किया है। परन्तु यदि शुद्ध स्वर्ण हो ही नहीं तो शुद्ध स्वर्ण मुद्राएँ कैसे निर्मित होंगी? महाभारत में भीष्म पितामह ने कहा था **'यतो धर्मस्ततो जय:'** जिस ओर धर्म होगा वही पक्ष विजयी होगा। परमात्मा की ओर से आवाज आई भीष्म तुम सत्य कहते हो, परन्तु ऐसा सत्य जिसके कहने का कोई लाभ नहीं। दोनों पक्षों में से कोई भी धर्म पर नहीं है? प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने स्वार्थ में फंसा हुआ है। परिणाम यही निकला कि कौरव पक्ष पराजित हो गया और पाण्डव पक्ष की भी पराजय ही हुई। दोनों का विनाश हो गया और उनके साथ देश का भी। यदि एक नया दल बन गया तो यह असम्भव है कि पुराने दल की ओर से विरोध न हो और यदि विरोध हुआ तो यह भी असम्भव है कि नये दल की ओर से उत्तर प्रत्युत्तर न दिया जाय। कुछ लोग कहते हैं कि हम ऐसे नियम बनायेंगे कि अधर्म व स्वार्थ दूर से ही डर कर भाग जायेंगे। जैसे कि उनके पूर्वजों ने सुरक्षा के पूर्व उपायों के करने में कोई कमी छोड़ रखी थी।

विदेश-प्रचार के विषय में श्री बाबूराम जी गुप्त लिखते हैं, ''सचमुच बाहर के देशों में भी आवश्यकता है, परन्तु भारत में उससे कोई थोड़ी आवश्यकता नहीं। मैं अपने सुयोग्य मित्र से शतप्रतिशत सहमत हूं। जब तक भारत में समुचित रीति से प्रचार नहीं होगा, विदेशों में प्रचार नहीं हो सकता, परन्तु मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं कि जब भारत में पूरा वैदिक धर्म फैल जाये तब विदेशों का विचार किया जाये। हम अब तक यही सोचते रहे हैं इसलिए अपने पुरुषार्थ, अपने तप और अपने धन का १/१०० भाग भी हमने विदेशों के लिए सुरक्षित नहीं रखा और बाहर से हमारे देश पर जो प्रभाव-संस्कार पड़ते हैं। उनका हम कुछ उपचार न कर सके। स्मरण रहे कि आजकल विदेशों की सीमाएँ (Borders) लगभग दूर हो चुकी हैं। प्रात: से सायं तक एक देश की वायु दूसरे देश में पहुंच जाती है। अत: यदि हम बाहर के देशों से सर्वथा उदासीन हैं तो इसका परिणाम हानिकारक होगा। इसलिए मेरा सदैव यह प्रयास रहा कि अपने प्रयासों का एक छोटा सा भाग दूसरों की ओर भी जाना चाहिए। जिससे वे लोग इतना तो जान सकें कि मानव समाज की सेवा करने वाली एक संस्था आर्यसमाज भी है जिसको ऋषि दयानन्द ने स्थापित किया था। साथ ही देश के प्रचार के सुधार की भी तो आवश्यकता है।

आजकल हमारे नेता पार्टीबाज़ी में इतने फंसे हुए हैं कि उनके पास किसी सुधार के लिए विचार करने का समय ही नहीं। इसका प्रभाव विदेशों में प्रचार पर भी पड़ता है।

'चो कुफ्र अज़ काबा बर ख़ेज़द कुजा मानद मुसलमानी'

अर्थात् जब काबा से ही कुफ्र पैदा हो जाये तो मुसलमानी कहां रहेगी? वास्तव में कुफ्र काबा से ही आरम्भ हुआ था। इसलिए मुसलमानी के लिए भी कहीं स्थान न रहा। यदि काबा से कुफ्र न उठता तो इस्लाम की यह दुर्दशा न होती। आर्यसमाज में भी कुफ़ देहली से ही उठता है और वह सर्वत्र फैल जाता है।

अभी कुछ दिन हुए एक आर्य नेता ने मुझे विदेश से लिखा कि यहां आर्यसमाज में दो पार्टियां हैं जो परस्पर निरन्तर लड़ती रहती है। मैंने उनको लिखा कि वास्तव में यह केन्द्र का प्रभाव है। जितने दल केन्द्र में हैं उतने ही विदेशों में भी। पार्टियों को (दलबन्दी) दबाने के लिए हम को पहले उन संस्थाओं को दबाना पड़ेगा जिनके कारण अथवा जिनके नाम पर ये पार्टियाँ बनी हुई हैं। कुछ धीरज से भी कार्य लेने की आवश्यकता है। जिस पत्रिका का हम ने ऊपर उद्धरण दिया है, उसमें लिखा है-

"आशा की केवल एक किरण शेष है, वह है आर्यसमाज की जनता। आर्यसमाज का उपर्युक्त वर्ग जहां अत्यन्त निकम्मा है वहां आर्यसमाज की साधारण जनता उतनी ही शुद्ध, पवित्र व सक्षम है।

आर्यसमाज की जनता में यदि कोई न्यूनता है तो केवल यह कि वह कानों व आंखों की बहुत कच्ची है। आर्यसमाज का कोई भी मनचला लीडर अथवा विद्वान् दयानन्द और आर्यसमाज की दुहाई देकर आर्य जनता को सुगमता से बहका कर मार्गभ्रष्ट कर सकता है।"

मेरी समझ में यह दोष केवल आर्य जनता का ही नहीं है। समस्त विश्व की जनता की स्थिति ऐसी ही है। इसका उपचार तो यही है कि जनता के सम्मुख ठीक ठीक जानकारी (जिस प्रकार से कि घटनायें घटित हों) आती रहे। जनता को उसको जो कुछ आवश्यक है, वह उपलब्ध करवाया जाये। हमारी जनता आजकल जिन आन्दोलनों में फंस जाती है, उनके बारे में यथार्थ रूप में घटनाएँ नहीं आतीं।

उत्तेजक वक्तव्य-

जनता की स्मृति बड़ी दुर्बल होती है। उदाहरण के लिए जनता को यह तो ज्ञात है कि हैदराबाद के सत्याग्रह में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हुई थी, परन्तु यह ज्ञात नहीं कि कितनी बार कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। इसलिए जब कोई मनचला सत्याग्रह के बारे में सोचता है तो वह उन अड़चनों को छुपाता है और जनता को केवल लुभावने दृश्य दिखाता है। इस प्रकार जनता फंस जाती है। मैंने कई बार देखा है कि अच्छे वक्ता जनता की आंखों में धूलि झोंकते रहते हैं और शास्त्रों से ऐसे प्रमाण देते हैं जो घर लौटने पर विचार करने पर तथ्यों के विपरीत सिद्ध होते हैं।

स्वामी दयानन्द ने जिस एक औषधि को सोचा व सुझाया वह यह कि ज्ञान का प्रसार हो। कोई व्यक्ति केवल गुरु अथवा पण्डित के आश्रय पर कार्य न करे, स्वयं भी सोचे और विचारे, पढ़े व मनन करे। आर्यजनता से हम यही आशा करते हैं। आर्यसमाज में सब को यह सोचने की आवश्यकता है कि आर्यसमाज कहां खड़ा है और हम कहां खड़े हैं।

परोपकारिणी सभा, अजमेर स्थापना दिवस - २०२५

दिनांक २७ फरवरी, २०२५ को ऋषि उद्यान में उल्लासपूर्वक आयोजित होगा। यह कार्यक्रम दो सत्रों में होगा। कार्यक्रम में पधारने वाले विद्वान् ये होंगे-

स्वामी विदेह योगी, स्वामी ओमानन्द सरस्वती, डॉ. सुरेन्द्र कुमार, डॉ. वेदपाल, मुनि सत्यजित्, श्री सज्जनसिंह कोठारी, डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी, आचार्य अंकित प्रभाकर, डॉ. आशुतोष पारीक। **कन्हैयालाल आर्य (मन्त्री)**

सम्पर्क सूत्र - ऋषि उद्यान - ९४१३३५६७२८ - परोपकारिणी सभा - ८८९०३१६९६१

ओं ध्वज का संदेश

स्वामी धर्मानन्द सरस्वती विद्यामार्तण्ड

ओ३म् परमेश्वर का सर्वोत्तम निज नाम है। वेदों, ब्राह्मणों, उपनिषदों, योगदर्शनादियों में सर्वत्र इसकी महिमा का गान करते हुए इसके जप का विधान किया गया है। ओ३म् क्रतास्मर क्लिबे स्मर कृतं स्मर।। (यजु. ४०,१६) इस मन्त्र में कर्मशील जीव को आदेश दिया गया है कि तू सद ओं पद वाच्य परमेश्वर का स्मरण कर और अपने किये कर्मों का प्रतिदिन स्मरण कर। ताकि इसमें सुधार किया जा सके। ओ३म् की ध्वनि अत्यन्त स्वाभाविक और हृदय हारिणी है। मनुष्यमात्र को एकता के सूत्र में बांधने का सर्वोत्तम साधन सबको ओ३म् का भक्त और सच्चा उपासक बनाना है। जब सब मनुष्य वेद भगवान् के परमपावन शब्दों में यह प्रार्थना करने लगेंगे कि

त्वं हि न पिताः वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ।
अयाते सुम्नमीमहे।।

ऋग्वेद ९-९८।। साम।। ६० अथर्व २०१०८२

हे सर्वाधार परमेश्वर! तू ही निश्चय से सबका पिता और तू ही कल्याणमयी मंगलमयी माता है अत: हम तुझसे सुख और शान्ति के लिये प्रार्थना करते हैं। तब सर्वत्र वैर विरोध का अन्त हो जायगा और शान्ति के साम्राज्य की स्थापना हो जायेगी। जब सब मानव मात्र, नहीं नहीं प्राणिमात्र का परमेश्वर ही एक पिता और मंगलमयी माता है और इसलिये सब परस्पर भाई-भाई है तब उनमें वैर विराध ईर्ष्या द्वेष कैसे रह सकता है।

ओ३म् के स्मरण और चिन्तन से जातिभेद अस्पृश्यता प्रजातिवाद रंग विद्वेष इत्यादि सब संकुचित भावनाओं की समाप्ति हो जाती है। परमात्मा जैसे हम मनुष्यों का पिता और मंगलमयी माता है वैसे ही सब पशु पक्षिओं का भी वही पिता माता है तब उन प्राणियों पर क्रूरता करने और उनको मारकर उनके मांस से अपने को तृप्त करने की निन्दनीय चेष्टा हम कर सकते हैं? करुणासागर मंगलमय भगवान् ने अपार कृपा करके मानव सृष्टि के प्रारम्भ में जो पवित्र वेदों का ज्ञान अग्नि-वायु, आदित्य और अंगिरा इन ४ ऋषियों के पवित्र अन्त:करण में मानवमात्र के कल्याणार्थ दिया उसमें स्पष्ट शब्दों में बताया गया है कि सब मनुष्य भाई-भाई है। उनमें जन्मादि के कारण कोई बड़ा व छोटा नहीं है इस बात को सदा मन में रखकर काम करने से ही मनुष्य सौभाग्य के लिये वृद्धि को प्राप्त होते हैं। सर्व शक्तिमान सब परमाणवादी को मिलानेवाला परमेश्वर सबका पिता और पृथ्वी जो सब मनुष्यों के लिये विविश्व पदार्थों को देकर उन्हें प्रसन्न करने वाली है और इस प्रकार प्रत्येक दिन को उत्तम दिन बनाने वाली है सबकी माता है। सारे संसार के लोगों में परस्पर प्रेम उत्पन्न करने और संगठन को दृढ़ करने वाला इससे उत्तम संदेश और क्या हो सकता है। ओ३म् की ध्वजा वेद मन्त्रों के द्वारा इसी प्रेम परस्पर हार्दिक सहयोग, ऐक्य और संगठन का संदेश देती है। आर्यों! इस ओ३म् की पवित्र ध्वजा के नीचे आकर सब एक हो जाओ, आपस के सब विरोधों को भूल जाओ, ईर्ष्या, द्वेष का अन्त कर दो और प्रेम से सबको गले लगाना सीखो। वेद भगवान् तुम्हें पुकार पुकार कर कह रहे हैं कि-

संगच्छध्वं संवदध्वं आदि ऋग्वेद के अन्तिम सूक्त के मन्त्रों में वेद की शिक्षाओं रूपी सागर को गागर में भर दिया है। परमपावनी श्रुति इन मन्त्रों के द्वारा मानवमात्र को सम्बोधन करते हुए कहती है कि हे मनुष्यों मिलकर एक उद्देश्य की पूर्ति के लिये आगे-आगे चलो, मिलकर प्रेम से बोलो, तुम्हारे मन ज्ञान द्वारा संस्कृत हों। सत्यनिष्ठ पूर्ण विद्वानों के समान तुम भी अपने कर्तव्य मात्र निभाते रहो। अपने कर्तव्य का सदा पालन करने में सदा तत्पर रहो।

तुम सबके संकल्प एक जैसे पवित्र और समान रूप से प्रीतियुक्त हों। तुम्हारे हृदय और मन परस्पर मिले हुए

हों जिससे तुम्हारा परस्पर सहयोग बढ़ता रहे। इससे उच्च मानवमात्र का कल्याणकारी सबमें परस्पर प्रेम को बढ़ाने वाला और क्या संदेश हो सकता है। आवश्यकता इस बात की है आर्य लोग परस्पर सर्व प्रकार के वैर विरोध का परित्याग करके सम्पूर्ण जगत् के सम्मुख एक उच्च आदर्श प्रेममय जीवन और सहयोग को प्रस्तुत करें।

ओ३म् ध्वजा के नीचे आकर सब को यह व्रत लेना चाहिए कि वे वैर विरोध की भावना को त्याग के परस्पर सहयोग से सब धार्मिक कार्यों को करेंगे और आर्य संस्थाओं को उन के उद्‌देश्यानुकूल उन्नत करने में तत्पर रहेंगे।

वेदों को प्रधान शिक्षा जो मनुष्य मात्र को मिलाने वाली है और जिस पर वैदिक धर्मोद्धारक शिरोमणि महर्षि दयानन्द का सबसे अधिक बल था वह विश्वमैत्री की है। **मित्रस्य मा चक्षुषा.** यजु. ३६/८

आर्याभिविनय के द्वितीय प्रकाश में इस मंत्र की व्याख्या करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा है- हे सर्वमुहृदेश्वर सर्वान्तर्यामिन्। सब भूत प्राणिमात्र मित्र की दृष्टि से यथावत् मुझको देखें सब मेरे मित्र हो जायें। कोई मुझसे किञ्चित् मात्र भी वैर दृष्टि न करे। आपकी कृपा से मैं भी निर्वेर होके सब भूतप्राणि और अप्राणी चराचरजगत् को मित्र की दृष्टि से स्वआत्म स्वप्राणवत् प्रिय जानूं अर्थात् पक्षपात छोड़ कर सब और देहधारी मात्र अत्यंत प्रेम से परस्पर वर्तमान करे। अन्याय से युक्त होके कभी किसी पर भी न वर्तें। यह परम धर्म का सब मनुष्य के लिये परमात्मा ने उपदेश किया है। सबको यही मान्य होने योग्य है। महर्षि दयानन्द के जिस वेद भाष्य की जयन्ती का समारोह श्रद्धा और उत्साहपूर्वक मनाया जाना है उसमें इस मंत्र के भावार्थ में महर्षि ने लिखा है-

वे ही धर्मात्मा जन है जो अपने आत्मा के सदृश सम्पूर्ण प्राणियों को माने, किसी से भी द्वेष न करे और मित्र के सदृश सबका सदा उपकार करे।

मान्या आर्य देवियों और सज्जनों। वर्तमान अवस्था अत्यन्त शोचनीय है। चारों ओर अज्ञानान्धकार छाया हुआ है। वेद से विमुख होकर लोग नाना सम्प्रदायों में विभक्त होकर भटकते फिरते ठोकरें खाते रहे हैं। अपने को भगवान् का अवतार कहने वालों को बाढ़ सी आ गई है, पूजा, तीर्थ स्नानादि द्वारा पापों से मुक्त होने की भावना अब भी विविध रूप में दिखाई देती है, योग के नाम पर भी पाखण्ड फैल रहा है, पाश्चात्य नर-नारियों की भोग विलास से तंग आकर योग की ओर प्रवृत्ति को देखकर पाखण्डो लोगों ने योग की दुकानें खोल ली है, बड़े-बड़े राष्ट्रों में परस्पर सच्चा प्रेम और सहयोग न होकर ईर्ष्या, द्वेष तथा स्पर्धा की भावना है, और निर्धनों तथा दलितों का शोषण हो रहा है। जातिभेद और अस्पृश्यता की भावनाएँ राजनैतिक क्षेत्र में भी प्रविष्ट होकर उसे दूषित बना रही है, दुराचार और भ्रष्टाचार का चारों ओर बोलबाला है तथा जनता सरकार इसे निर्मूल करने में अपने को असमर्थ पा रही है ऐसे समय में ओ३म् की ध्वजा और वेदभानु का प्रकाश जो इस नितान्त शोचनीय दशा को दूर कर सकता है। ओ३म् की ध्वजा के नीचे आकर और वेदभानू के दिव्य आलोक से आलोकित होकर ही लोग सब प्रकार के अज्ञान दुराचार, भ्रष्टाचार और पाखण्ड् से दूर कर सकते हैं अन्यथा कभी नहीं। अत: आर्यों पर बड़ा भारी उत्तरदायित्व है कि वे ओ३म् ध्वजा को हाथ में लेकर और वेद की ज्योति से स्वयं द्योतित होकर इस सम्पूर्ण शोचनीय परिस्थिति को परिवर्तित करने के लिये कटिबद्ध हो जाए। आओ प्रिय बंधुओं मान्या देवियों। कमर कस के खड़े हो जाओ। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना सब आर्यों का परम धर्म है । महर्षि दयानन्द के इस आदेश का पालन करते हुए आगे बढ़ो। निराश-वाद को अपने पास न फटकने दो। आपको आगे ही आग बढ़ना है और तब तक विश्राम नहीं लेना जब तक दुराचार, भ्रष्टाचार, अन्याय, शोषण, साम्प्रदायिकता का विष और पाखण्ड़ों का अन्त नहीं हो जाता। पर इसके

लिए आपको परमेश्वर की सच्ची उपासना और ईश्वरीय ज्ञान वेदों को श्रद्धापूर्वक स्वाध्याय द्वारा अपने अन्दर भरना होगा। **उद्यानं ते पुरुष नावयानं** के स्फूर्तिदायक, नवजीवनदायक वेद के उपदेश आप में नवचैतन्य का संचार करेंगे जिनमें पुरुष श्री संबोधन करते हुए सर्वशक्तिमान् भगवान् ने कहा है कि हे पुरुष! उठ तू ऊपर ऊपर उठता जा सदा उन्नति करता जा। कभी तेरी अवनति न हो। तू कभी नीचे न गिर:। मैं (सर्वशक्तिमान्) तेरी शक्ति का विस्तार करता हूँ तुझे शक्तिशाली बनाता हूँ ताकि तू उत्तम जीवन व्यतीत कर सके। इस अमृत सुखमय शरीर रूपी रथ पर तू सवार हो जा और अनुभवी बनकर अन्यों को भी ज्ञान और यज्ञ का उपदेश कर। प्रिय आर्य बन्धुओं! ओ३म् पदवाच्य परमेश्वर की सच्ची उपासना और वेदों के स्वाध्याय की न्यूनता के कारण तुम्हारे अन्दर जो निर्बलता आ गई है इसी से तुम निराशा के प्रवाह में बैठ कर यह समझने लगते हो कि हम क्या करें हमारे करने से करने क्या बनता है? हमारी कौन सुनता है? इस निर्बलता और निराशा को परित्याग करो। अपने व्यक्तित्व पारिवारिक और सामाजिक जीवनों को अधिक से अधिक वेदानुकूल बनाओ। सर्वशक्तिमान् भगवान् के सच्चे भक्त उपासक बनो। वेदों का नियमित रूप से प्रतिदिन सपरिवार स्वाध्याय करो तब तुम देखोगे तुम्हारे अन्दर सर्वशक्तिमान् भगवान् की कृपा से कितनी दिव्य शक्ति का संचार हो जाता है और तुम्हारे सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों का जीवन कितना पवित्र बन जाता है। परमात्मा कृपा करे कि ओ३म् ध्वज का यह उत्तोलन जो वेद दिवाकर की प्रखर किरणों से आलोकित है सब आर्यों में कर्त्तव्य भावना, उत्साह और उल्लास को जागृत करने वाला और विश्वभर में शान्ति को लाने वाला हो।

इन्द्रो विश्वस्य राजति यजु. ३६,८

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।।

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर महर्षि दयानन्द सरस्वती की २००वीं जन्म-जयन्ती शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में ५० प्रतिशत की छुट

पुस्तक का नाम	वास्तविक मूल्य रुपये
विवाह पद्धति	२०
शिक्षापत्रीध्वान्त निवारण	०२
वेदान्तिध्वान्त निवारण	०२
समाधी	१००
सामवेद शतक	३०
जिज्ञासा विमर्श	१००
इतिहास प्रदूषण	१००
इतिहास साक्षी	५०
वेदामृत	५०
सत्यासत्य निर्णय	२५
The Book of Prayer	35
Kashi Debate	20
A Critique of Swami Naryan Seet	20
An Examination of Vallabh Seet	20
Five Great Rituals of The Day	20
Bhramaccheden	25
Bhranti Nivarana	35
Atmakatha	20
Gokarunanidhi	12
Dayanand Interparetation of Vedas	05
संध्या सुरभि कलेण्डर	३५
महर्षि दयानन्द की शिक्षाएँ कलेण्डर	२५
The Pre Islamic Religious of Arabia	20
वेदमाता	१००
शंका समाधान	७०
ईश्वर	१५०
नवयुग की आहट	६०
वैदिक इस्लाम	१०
पं. आत्माराम अमृतसरी	१००
इतिहास बोल पड़ा	१००
मृत्यु सूक्त	२००
सत्यार्थ सुधा	१५०

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-
दूरभाष-**0145-2460120,**चलभाष- **7878303382**

ज्ञानसूक्त - २४

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्या

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रही है। इसी शृंखला में ऋग्वेद १०/७१ 'ज्ञानसूक्त' की व्याख्यान माला प्रकाशित की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा कर रही हैं।

-सम्पादक

अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः।
आदध्नास उपकक्षास उत्वे ह्रदा इव स्नात्वा उत्वे ददृषे।।

हम चर्चा कर रहे हैं वेद मन्त्रों की। वे मन्त्र हैं ऋग्वेद के ज्ञानसूक्त के। यह ऋग्वेद के १०वें मण्डल का ७१वाँ सूक्त है। इसका ऋषि बृहस्पति और देवता ज्ञान है। हम इसके सातवें मन्त्र की चर्चा कर रहे हैं।

इसमें जो पहली पंक्ति है उसमें दो-तीन बातों को हमने स्पष्ट किया। पहली बात कि हमारे पास जो साधन हैं वो दो तरह के हैं-एक दिखाई देने वाले और एक दिखाई न देने वाले। दिखाई देने वाले साधनों के रूप में आँख और कान हैं जो ज्ञान का आधार हैं। तो मन्त्र ने कहा- अखण्वन्तः कर्णवन्तः सखायः। यदि इतने ही ज्ञान के साधनों से हमें ज्ञान प्राप्त होता तो हमारा सबका ज्ञान न तो भिन्न होता और न कम और न परिस्थिति से अलग-अलग होता। एक समय में एक वस्तु को देखने वाले, पढ़ने वाले, एक समय में एक उपदेश को सुनने वाले लोगों का ज्ञान कभी भी भिन्न नहीं होता, भिन्न स्तर का नहीं होता। इसलिए पता लगा एक तो ज्ञान का साधन अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः है लेकिन आगे कहता है- मनोजवेष्वसमा बभूवुः। इसका मतलब एक साधन और है और वो साधन है मन। अर्थात् उस मन के बिना हमें ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। लेकिन उस मन की विशेषता यह है कि वह आँख-कान की तरह एक जैसा नहीं है। वह सबको एक ही तरह का नहीं मिला हुआ है। उसकी एक ही जैसी योग्यता सबके पास नहीं है। इसलिए यह जो दो प्रकार के साधन हमारे सामने ज्ञान प्राप्ति के हैं, उनमें एक साधन तो अपरिवर्तनीय है, या सामान्य रूप से एक जैसा है और दूसरा साधन प्रत्येक का एक-दूसरे से भिन्न है और इसी बात को मन्त्र के दूसरे भाग में विशेष रूप से स्पष्ट किया गया है। वहाँ एक बड़ी प्राकृतिक उपमा दी गयी है जैसे कोई व्यक्ति किसी नदी में, किसी तालाब में स्नान करने के लिए जाता है, तो तालाब तो बड़ा है, उसमें स्नान करते दिखाई नहीं देते हैं। कुछ को देखते हैं कि वे किनारे पर बैठकर ही नहा रहे होते हैं। कुछ व्यक्ति, यदि घाट बना हुआ है तो एक-दो सीटी उतर कर नहा रहे होते हैं। लेकिन कुछ लोगों को आप देखेंगे कि वो तो तैर कर आर-पार जा रहे होते हैं। वे तालाब के बीचों-बीच छलांग लगा रहे होते हैं। अंतर यह है कि तालाब तो एक ही है और एक ही तालाब में सभी को स्नान करने का अवसर मिल रहा है। लेकिन, इससे आनन्द उठाने का, लाभ उठाने का, इसका उपयोग करने का प्रकार सबका अलग-अलग है। उनसे पूछो आप अन्दर क्यूँ नहीं जाते, कहते हैं, हमें तैरना नहीं आता। दूसरे कहते हैं हमें भय लगता है, तीसरे कहते हैं घुटने तक ही पानी में जा सकते हैं। कुछ लोग थोड़ा आगे चले गए तो कमर तक चले गए, छाती तक चले गए।

मन्त्र कहता है कि जैसे एक तालाब में जो स्नान

करने वाले हैं उनके स्तर अलग-अलग हैं, वैसे ही ज्ञान का जो सागर है, ज्ञान का जो सरोवर है, उसके अन्दर गोता लगाने वालों की, उससे स्नान करने वालों की योग्यता भी बहुत अलग-अलग तरह की है। कितने अलग तरह की है इस बात को समझाने के लिए इस मन्त्र की दूसरी पंक्ति बोली गयी है, ईश्वर के द्वारा दी गयी है- आदध्नास उपकक्षास उत्वे ह्रदा इव स्नात्वा उत्वे ददृषे। अरे देखो, एक तालाब के अन्दर कुछ लोग अपने मुख तक पानी में डूबे हुए हैं। अर्थात् उनके पैर नीचे टिके हुए हैं और इससे आगे वे जाना नहीं चाहते हैं। कुछ और इससे भी कम है, जो केवल कक्षा तक, छाती तक पानी में डूबे हुए हैं। वो उसमें ही खड़े हो कर स्नान कर लेना चाहते हैं। लेकिन एक कहता है, स्नात्वा उत्वे ददृषे, वह गोता लगा के अन्दर तक डूब के स्नान कर रहे हैं। वैसे ही ज्ञान की जो परिस्थिति है, इसमें कोई गोता लगाकर स्नान कर सकता है, कोई कक्षा तक डूबकर स्नान कर सकता है, कोई मुख तक डूब कर स्नान कर सकता है। अर्थात् जिसके पास जैसी मानसिक दक्षता है, जैसी मानसिक योग्यता है, उसको वैसा ज्ञान प्राप्त होता है। इसमें यास्क ने एक बड़ी सुन्दर बात लिखी हे। वहाँ जब वेद का प्रकरण चलता है, मन्त्र का अर्थ करने की बात आती है तो वहाँ उन्होंने एक बात कही है- प्रकरणशः निर्वक्तत्याः। अर्थात् जब आप मन्त्रों की चर्चा करते हैं तो उनका पूर्वा पर प्रसंग हमें अवश्य ध्यान में रहना चाहिए। हमें उसका प्रकरण अवश्य मालूम होना चाहिए तो उसके द्वारा ही हमें अर्थ करन में कठिनाई भी नहीं होगी और हमारा किया हुआ अर्थ गलत भी नहीं होगा। प्रकरण के अनुसार ही मन्त्रों का निर्वचन करना चाहिए, उनको तोड़कर के उनको टुकड़ों में लाकर के, प्रसंग से निकाल कर, उनका मनमर्जी से अर्थ हमें नहीं करना चाहिए। वहाँ एक रोचक बात कही है कि जब हम मन्त्रों का र्थ करत हैं तो वह अर्थ हमें केवल आँखों से दिखाई नहीं देता, केवल कानों से सुनाई नहीं देता बल्कि मन्त्रों को जब हम पढ़ते हैं और मन्त्र देने वाला, क्योंकि गम्भीर है, मतलब जो हमको सुना रहा है या जिसका लिखा हुआ हम पढ़ रहे हैं उसका ज्ञान अपूर्ण है। तो एक पूर्ण के द्वारा दिया हुआ ज्ञान और उसको एक अपूर्ण व्यक्ति अपनी व्याख्या में, अपने भाषण में या अपने प्रवचन में या अपने लेखन में, समग्र रूप से उपस्थित नहीं कर सकता, क्योंकि उसका सामर्थ्य पूर्ण नहीं है। वह अपनी योग्यता के अनुसार जितना भी वह जानता है, समझता है वैसा कहता है। तब हमारे पास उस पूर्ण ज्ञान तक पहुँचने का, जानने का क्या उपाय बचता है? तब वहाँ एक बात कही गयी है- जो बहुत विद्वान् लोग हुआ करते थे, उनको हम ऋषि कहते हैं और ऋषियों का मन्त्रों से विशेष सम्बन्ध है। अर्थात् जब भी मन्त्र आएगा, तब यह भी आएगा कि इसका ऋषि कौन है। अर्थात् मन्त्र को जो पढ़ने वाला है, वो सब ऋषि हैं या ऋषि मन्त्र को जो पढ़ने वाला है, वो सब ऋषि है या ऋषि मन्त्र विशेष के बारे में पढ़ता है या ऋषि विशेष मन्त्रों को पढ़ता है। इस बात पर जब हम विचार करते हैं तो शास्त्र कहता है, 'ऋषि दर्शनात्।' ऋषि उसे कहते हैं जो मन्त्रों की गहराई को देख सकता हो। जो उसके अन्दर झाँक सकता हो, जो उसके अन्दर उतर सकता हो, उसके अन्दर छिपे हुए रहस्य को बाहर लाने की क्षमता रखता हो। वह जो ऋषि है- स्तोमान् ददर्शः इति औपमन्यवः। कहता है कि जो उपमन्यु ऋषि है उसने मन्त्रों के समूह को गहराई से देखा था, छानबीन की थी। उसको हमारे सामने प्रस्तुत किया था। ऋषि के पास हमारे से अलग क्या चीज होती है, जिसके कारण वो मन्त्रों के अर्थों को गहराई से देख पाते हैं। तो वहाँ एक बड़ा रोचक तथ्य दिया गया है- ऋषि जब किसी मन्त्र के अर्थ को बताता है, ऋषि द्वारा जब किसी मन्त्र की प्रतीति हमें होती है तो यह प्रतीति केवल उसके द्वारा हो सकती है या उससे अलग भी यह प्रतीति हो सकती है। यदि केवल उसके द्वारा हो सकती है तो उसके पास

इस प्रतीति का साधन होना चाहिए, कारण होना चाहिए। यह उसके पास मौलिक नहीं है, क्योंकि वह भी एक मनुष्य है और उसके पास वह प्रतीति पूर्ण भी नहीं है, लेकिन हमसे अधिक है। तो इतनी गहराई तक वह कैसे जा सकता है। जो मनुष्य है, वही देव है। जो मनुष्य है वही ऋषि है। जो मनुष्य है वही असुर है। जो मनुष्य है, वही मनुष्य है अर्थात् उसकी मनुष्यता, उसका ऋषित्व उसका असुरत्व, उसका देवत्व उसकी मानसिक शक्तियों के कारण होता है, उसके संस्कारों के कारण होता है, आचार के कारण होता है तो ऋषित्व भी हमारे किसी विशिष्ट क्षमता के कारण आता है। इसको समझने के लिए, इसी प्रसंग में यास्क ने एक और रोचक बात लिखी है- ऋषिषु उत्क्रात्मत्सु मनुष्याः देवान् अब्रुवन् को न ऋषिर्भविष्यति इति। अर्थात् एक प्रसंग ऐसा आया जब ऋषि संसार से जाने लगे, ऋषित्व इस संसार से कम होने लगा। तो मनुष्यों ने सोचा अब हमें कौन ज्ञान देगा, हमें वेद का रहस्य कौन समझाएगा, क्योंकि यह काम तो ऋषियों का होता था। तो उन्होंने देवताओं से पूछा, ऋषि तो चले गए, तो वेद का ज्ञान हमें कैसे प्राप्त होगा? तो देवताओं ने एक चीज मनुष्यो को दी और वही वास्तव में ऋषित्व का आधार है। वही बात मनुष्यों में जो ऋषि कोटि के हैं, उनके अन्दर है। वे कहते हैं, जो कोई ऊहा कहता है, उसको अनूचान कहते हैं, उसको मान्य कहते हैं, विद्वान् कहते हैं। उसके अन्दर ऋषित्व की क्षमता, योग्यता आ जाती है। वहाँ पंक्ति लिखी- जब ऋषियों की समाप्ति हो रही थी, प्रस्थान हो रहा था, तो मनुष्यों ने देवताओं से कहा, अब हमें कौन इस तरह का ज्ञान देगा, हमारा मार्गदर्शन करेगा, दुःखों से छूटने का मार्ग दिखाएगा। तो देवताओं ने मनुष्यों को 'ऊहा' दे दी 'ऊहस्तर्कः तेभ्यः तर्कम् ऋषिम् प्रायच्छन्' उन्होंने तर्क देकर के उसे ऋषि बता दिया और इससे जो बात सन्देह की हो, समझने में न आती हो उसको इसके द्वारा समझ सकते हो और मनुष्यो से उस तर्क के द्वारा वेदमन्त्रों के अर्थों को जाना और समझा जाता है। इसका उन्होंने उदाहरण दिया 'ऊहस्तर्कः' तर्क 'ऊहा' को कहते हैं अर्थात् जब कोई परिस्थिति विकट होती है और बाहर न कोई बताने वाला होता है, न किसी पुस्तक में कुछ लिखा हुआ होता है, ऐसे समय में मनुष्य की बुद्धि के अन्दर जो उपाय सूझता है, वह ऊहा कहलाता है, उस तर्क से जो ऊहा पैदा होती है वह हमारी समस्या समाधान का आधार बनती है। इसे आचार्य चरक ने 'युक्ति' कहा है। उन्होंने कहा है 'उपरितिष्ठति युक्तिज्ञः द्रव्यज्ञानवताम् सदा।' वे लिखते हैं कि आदमी जानता कि यह इस रोग की दवा है। आदमी जानता है कि यह इस रोग की मुख्य बातें हैं, लेकिन उनको कैसे काम में लेना है, कैसे रोग का निवारण होगा, उसको जानने के लिए ऊहा करनी पड़ती है। उस ऊहा के बिना उसका काम नहीं चलता। कौन सी चीज कितनी मिलेगी, कब दी जाएगी, किस रोगी के लिए कितनी मात्रा में दी जाएगी, यह जो विश्लेषण है, यह चिकित्सक को स्वयं करना पड़ता है। वैसे ही मनुष्य को भी अपनी बहुत सारी बातों का जो निर्णय है, वह हम समय किसी का लिखा हुआ नहीं मिलता है, उसको स्वयं करना पड़ता है। जो स्वयं निर्णय लेता है वह युक्तिज्ञ होता है। क्या करने से क्या हो जाएगा, इसका जो चिन्तन है, मनन है, विचार है, वह युक्ति कहलाती है। उसी को यहाँ पर तर्क कहा गया है, 'ऊह' कहा गया है। उस ऊहा के द्वारा हम मन्त्रों को खोल सकते हैं, इसलिये यह तर्क ऋषियों का स्थान लेता है। इसकी चर्चा हम एक बार पीछे कर चुके हैं। जब धर्म की परिभाषा करते हुए महर्षि मनु एक बात कहते हैं- आर्ष धर्मोपदेशं च वेद शास्त्र अविरोधिना। यस् तर्केण अनुसंधत्ते स धर्मम् वेद नेतरः। वे कहते हैं, जो ऋषियों ने कहा है, वो हमारे लिए धर्म है, जो वेदानुकूल है वह हमारे लिए धर्म है और एक महत्त्वपूर्ण बात जो उन्होंने कही, जिसको निरुक्त ने कहा, तर्कम् ऋषिम् प्रायच्छन् उसके लिए मनु महाराज कहते हैं, यस्तर्केण अनुसंधत्ते स धर्मम् वेद नेतरः।

अर्थात् तर्क के द्वारा उस वेद को समझ सकता है, वह धर्म को समझता है। इस तर्क की सबसे बड़ी विचित्रता और विशेषता है कि तर्क एक पैना परषु है, एक छेदने और काटने वाला औजार है, लेकिन उस औजार की एक विशेषता है कि वह यह नहीं पहचानता कि वह किस चीज को काट रहा है और क्यूँ काट रहा हूँ। यह तो काटने वाले पर निर्भर करता है कि वह क्या काटना चाहता है- वह वृक्ष को काटना चाहता है या काँटे को काटना चाहता है। यह काटने की प्रक्रिया तो होती है तर्क से, लेकिन काटने वाला जो होता है, वह तर्क के प्रयोग करने का अधिकारी, विद्वान् होता है, उसके अन्दर ऋषित्व होता है, तब तर्क का जो उचित उपयोग है, वह उसके द्वारा किया जा सकता है।

यह कैसे सम्भव है? जब हम तर्क शब्द का प्रयोग करते हैं तो इसके साथ एक और शब्द हम काम में लाते हैं, जिसे हम 'कुतर्क' कहते हैं। अर्थात् तर्क अच्छा भी हो सकता है और तर्क खराब भी हो सकता है। जैसे तलवार आपको भी काट सकती है दुश्मन को भी मार सकती है। कुल्हाड़ी आपके लिए ईंधन भी ला सकती है और कुल्हाड़ी आपकी ऊँगली भी काट सकती है। ऐसी स्थिति में कहा कि तर्क दुधारी तलवार है- वो आपके पक्ष में भी चल सकती है और आपके विरोध में भी चल सकती है। इसलिए ऋषि कहते हैं जो तर्क ऋषियों के, वेद के अनुकूल है, हमारे शास्त्रों के अनुकूल हैं, जो उनको खोलता है वह उचित है, ठीक है। जो शास्त्रों को खोलने, उनके रहस्यों को समझाने की क्षमता रखता है, वही तर्क ऋषित्व का काम करता है।

तो ऊहा से हमने तर्क को निकाल लिया है और उस बात को मन्त्र में कहा है कि वह ऊहा, क्योंकि भिन्न-भिन्न होती है, इसलिए वेद ने कहा, कोई ज्ञान में कमर तक डूबा हुआ है, कोई ज्ञान में गले तक, मुख तक डूबा हुआ है और ज्ञान में पूरा डूब कर नहाया हुआ है। यह नहाना हमारे आन्तरिक साधन 'मन' के कारण से भिन्न-भिन्न होता है।

*** निवेदन ***

कीर्तिशेष आचार्य धर्मवीर जी ने अपने दानदाताओं के सहयोग से ऋषि उद्यान में निरन्तर चलने वाले ऋषि लंगर की व्यवस्था की थी, जो सतत संचालित हो रही है। इसमें ऋषि उद्यान की वृहद् भोजनशाला में **ऋषि उद्यान में निवास करने वाले योगसाधकों, संन्यासियों-वानप्रस्थियों, ब्रह्मचारियों व आचार्यों के भोजन, दुग्ध, फल इत्यादि की व्यवस्था की जाती है।**

ऋषि उद्यान में आने वाले अतिथियों, विद्वानों, दर्शनार्थियों इत्यादि के निवास तथा भोजनादि की व्यवस्था इसके अन्तर्गत संचालित की जाती है।

आर्य दानदाता-परिवारों के सहयोग से ही यह अतिथि-यज्ञ सम्भव हो पा रहा है। अत: हम सभी आर्य परिवारों का दायित्व एवं कर्त्तव्य है कि हम इस यज्ञ में होता बनकर निरन्तर दान-रूपी आहुति प्रदान कर पुण्य के भागी बनें। विभिन्न संस्कारों एवं अन्य शुभावसरों पर अपनी दान-रूपी आहुति देना न भूलें, ताकि यह लोकोपकारी अतिथि यज्ञ निरन्तर चलता रहे।

इस अतिथि यज्ञ हेतु आप **५१००/-(पाँच हजार एक सौ रुपये) प्रतिवर्ष** भेजकर अपना सहयोग प्रदान कर अनुग्रहीत करें।

ओम्मुनि
प्रधान

कन्हैयालाल आर्य
मन्त्री

व्याकरण-प्रवेशभाष्य

अंकुर नागपाल

१.१. अथ शब्दानुशासनम्।

प्रतिज्ञा : अब 'शब्दानुशासन' [अर्थात् शब्दों के अनुशासन/शास्त्र; व्याकरण] का आरम्भ किया जाता है।

१.२. केषां शब्दानाम्?

प्रश्न : किन शब्दों का अनुशासन किया जाता है?

१.३. लौकिकानां वैदिकानां च।

उत्तर : लौकिक और वैदिक शब्दों का।

[अभिप्राय यही है कि वेदों में पठित, इतिहास-काव्य-आदि लौकिक साहित्य में प्रयुक्त अथवा लोक-व्यवहार में बोले जाने वाले-सभी शब्दों का अनुशासन व्याकरण किया जाता है।]

२.१. कस्तर्हि शब्दः?

प्रश्न : तो फिर 'शब्द' क्या है?

२.२. प्रतीतपदार्थको लोके ध्वनिः 'शब्दः' इत्युच्यते।

उत्तर : लोक में जिससे किसी अर्थ की प्रतीति हो, ऐसी ध्वनि 'शब्द' कहलाती है।

[जैसे 'गौ' बोलते ही हमारे चित्त में गलकम्बल, पूँछ, खुर, सींग एवं ककुद वाले किसी चतुष्पाद प्राणी-विशेष की छवि उदित होती है। इस प्रकार; यह 'गौ' ध्वनि उक्त चतुष्पाद प्राणी की प्रतीति करवाने वाली है। अतः इस ध्वनि को हम 'शब्द' कहते हैं।]

३.१. कानि पुनः शब्दानुशासनस्य प्रयोजनानि?

प्रश्न : इस 'शब्दानुशासन' (व्याकरण) के क्या प्रयोजन हैं?

३.२. रक्षोहागमलध्वसन्देहाः।

उत्तर : [व्याकरण के ये पाँच प्रयोजन हैं-] रक्षा, ऊह, आगम, लघु और असन्देह।

३.२.१. रक्षार्थं वेदानामध्येयं व्याकरणम्; लोपागमवर्णविकारज्ञो हि सम्यग्वेदान् परिपालयिष्यति।

उत्तर : वेदों की 'रक्षा' [अर्थात् उपलब्ध वेदराशि के नाश/विकृति के परिहार] के लिए व्याकरण का अध्ययन करना चाहिए। वर्णों के लोप (अदर्शन), आगम (वर्णोपार्जन) एवं वर्णविकार (आदेश) को जानने वाला ही वेदों का भलीभांति परिपालन [अर्थात् अनादि-गुरुशिष्य-परम्परा-प्राप्त आनुपूर्वी का अभ्यास] कर सकेगा।

[''अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्षत्। तद्धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति''

(यजु.४०.४)

इस वेदमन्त्र में लोप, आगम एवं वर्णविकार के उदाहरण युगपत् उपलब्ध हैं। वस्तुतः %लोप% का अर्थ है : दो ध्वनियों में से किसी एक ध्वनि का अदृश्य हो जाना। यथा ''देवा आप्नुवन्'' में ''देवाः'' के परे ''आ'' होने से विसर्ग का लोप हो गया। 'आगम' का अर्थ है : पूर्ववर्ती ध्वनियों में एक नवीन ध्वनि का आकर मिल जाना। यथा ''तस्मिन्नपः'' में 'तस्मिन्' के परे 'अ' होने से न्-ध्वनि का आगम हो गया। वहीं; 'वर्णविकार' का अर्थ है : एक ध्वनि के स्थान पर किसी अन्य ध्वनि का आ जाना। यथा ''नैनद्देवाः'' में 'देवाः' परे होने से 'एनत्' के 'त्' के स्थान पर 'द्' का आदेश हो गया।]

३.२.२. **ऊहः खल्वपि। न सर्वैर्लिङ्गैः, न च सर्वाभिर्विभक्तिभिः, वेदे मन्त्रा निगदिताः। तान्न**

अवैयाकरणः शक्नोति यथायथं विपरिणमयितुम्; तस्मात्।

उत्तर : 'ऊह' [अर्थात् उपलब्ध-अर्थ-विषयक शास्त्रानुकूल तर्क-वितर्क] के लिए भी। वेद के मन्त्र सभी लिंगों और विभक्तियों के द्वारा पठित नहीं हैं। [चूंकि उनके अर्थ का विचार करते हुए] व्याकरण को न जानने वाला उन्हें आवश्यकतानुसार बदल नहीं सकता; इसलिए [व्याकरण को पढ़ना चाहिए]।

[उदाहरण : "भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा:" (यजु.२५.२१) में 'कर्णैः' के स्थान पर 'कर्णेभिः' प्रयोग हुआ है। "पादोऽस्य विश्वा भूतानि" (यजु.२५.२१) में 'विश्वा' और 'भूतानि' में परस्पर लिंगभेद है। इन वेदमन्त्रों पर विचार करते समय यथायोग्य अर्थग्रहण करना चाहिए; जो कि व्याकरण के विना सम्भव नहीं है।]

३.२.३. आगमैः खल्वपि; ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्चेति, प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्।

उत्तर : 'आगम' [अर्थात् अविच्छिन्न गुरु-शिष्य-परम्परा से प्राप्त उपदेश/ज्ञानराशि की प्राप्ति] के लिए भी। यह ब्राह्मण का निष्कारण धर्म [अर्थात् नित्य कर्म] ही है कि वह षडंग वेद का अध्ययन (शब्दग्रहण) एवं ज्ञान (अर्थग्रहण) प्राप्त करे। और उन छहों वेदांगों में व्याकरण प्रधान है।

[शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द और ज्योतिष-ये छ: 'वेदांग' कहलाते हैं।]

३.२.४. लघ्वर्थं च; न चान्तरेण व्याकरणं लघुनोपायेन शब्दाः शक्या ज्ञातुम्।

उत्तर : 'लघुता' [अर्थात् अल्प प्रयास] के लिए भी। व्याकरण को छोड़कर किसी अन्य उपाय के द्वारा सभी शब्दों का ज्ञान नहीं हो सकता।

[इसकी अधिक स्पष्टता नीचे ४.५ में देखें।]

३.२.५. असन्देहार्थं च।

उत्तर : और 'असन्देह' के लिए।

[किसी शब्द का अर्थ करने में सन्देह की यथासम्भव न्यूनता हो, इसके लिए व्याकरण का अध्ययन करना चाहिए।]

४.१. शब्दानुशासनम् इदानीं कर्त्तव्यम्।

प्रतिज्ञा : अब शब्दों का अनुशासन करना चाहिए।

४.२. तत्कथम्? किं शब्दोपदेशः कर्तव्यः, आहोस्विद् अपशब्दोपदेशः, आहोस्विद् उभयोपदेश इति? किं पुनरत्र ज्यायः?

प्रश्न : वह कैसे? क्या शब्दों का उपदेश करना चाहिए? या अपशब्दों का उपदेश करना चाहिए? अथवा दोनों का ही उपदेश करना चाहिए? शब्दों और अपशब्दों-इन दोनों के उपदेशों में क्या अधिक उपयुक्त है?

[यहाँ 'शब्द' अर्थात् व्याकरण-सम्मत शुद्ध/साधु पद। जबकि 'अपशब्द' अर्थात् अशुद्ध/असाधु पद; जो व्याकरण के नियमों से विरुद्ध जाकर प्रयुक्त होते हैं।]

४.३. लघुत्वाच्छब्दोपदेशः; एकैकस्य शब्दस्य बहवोऽपभ्रंशाः।

उत्तर : लाघव के कारण शब्दों का उपदेश करना चाहिए; क्योंकि प्रत्येक शब्द के अनेक अपभ्रंश हैं।

[शुद्ध शब्दों की अपेक्षा अशुद्ध शब्द की गिनती बहुत अधिक हैं। यथा एक 'गौ' शब्द के 'गाय', 'गऊ' इत्यादि अनेक अपभ्रंश हैं। अतः शुद्ध शब्दों के बताने में प्रयासों की अपेक्षाकृत लघुता/अल्पता है।]

४.४. अथैतस्मिन् शब्दोपदेशे सति किं शब्दानां प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः कर्त्तव्यः?

प्रश्न : तो फिर शब्दों का उपदेश करते समय उनका ज्ञान करवाने के लिए क्या उनमें से प्रत्येक का पाठ करना होगा?

४.५. न! एवं हि श्रूयते-बृहस्पतिरिन्द्राय दिव्यं

वर्षसहस्त्रं प्रतिपदोक्तानां शब्दानां शब्दपारायणं प्रोवाच नान्तं जगाम। बृहस्पतिश्च प्रवक्ता, इन्द्रश्चाध्येता, दिव्यं वर्षसहस्त्रम् अध्ययनकालः, न चान्तं जगाम; किं पुनरद्यत्वे! तस्मात्–अनभ्युपायः शब्दानां प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः।

उत्तर : नहीं! ऐसा सुना जाता है कि बृहस्पति ने इन्द्र के प्रति एक हज़ार दिव्य वर्षों तक सभी 'शब्द-पारायण' किया, किन्तु उसका अन्त नहीं हुआ। बृहस्पति प्रवक्ता थे, इन्द्र अध्येता थे, एक हज़ार दिव्य वर्षों का लम्बा अध्ययन काल था; तो भी उस 'शब्द-पारायण' का अन्त नहीं हुआ। फिर आज [के युग में] तो क्या ही हो सकेगा! इसलिए प्रत्येक पद का पाठ शब्दों के ज्ञान का समीचीन उपाय नहीं है।

[एक दिव्य वर्ष=३६० मानवीय वर्ष। शब्दपारायण=सभी सम्भावित सुबन्त एवं तिङन्त पदों के समस्त रूपों का अध्यापन।]

५.१. किं पुनः शब्दस्य ज्ञाने धर्मः, आहोस्वित् प्रयोगे? ज्ञाने धर्म इति चेत्, तथाऽधर्मोऽपि प्राप्नोति। यथैव शब्दज्ञाने धर्मः, एवम् अपशब्दज्ञानेऽपि अधर्मः। यदि प्रयोगे, सर्वो लोकोऽभ्युदयेन युज्येत।

प्रश्न : तो क्या शब्द के ज्ञान में धर्म है या प्रयोग में? क्योंकि यदि "ज्ञान में धर्म है"–ऐसा मानें, वैसा ही अधर्म भी प्राप्त होगा। शब्दों का ज्ञान होने पर जैसे धर्म होगा, वैसे ही अपशब्दों के ज्ञान होने पर अधर्म भी प्राप्त होगा। और यदि केवल प्रयोग करने से ही धर्म होता, तो सभी लोग [जाने-अनजाने में साधु शब्दप्रयोग के द्वारा] अभ्युदय से युक्त हो जाएँगे!

५.२. शास्त्रपूर्वके प्रयोगेऽभ्युदयः। यथा वेदशब्दा नियमपूर्वकम् अधीताः फलवन्तो भवन्ति, एवं यः शास्त्रपूर्वकं शब्दान् प्रयुङ्क्ते; सोऽभ्युदयेन युज्यते।

उत्तर : वस्तुतः शास्त्रज्ञानपूर्वक शब्दप्रयोग करने पर ही अभ्युदय होता है [अन्यथा नहीं]। जैसे वेदों के शब्द [आचार-उच्चारण-आदि की शुद्धि के] नियमों के साथ पढ़े जाने पर ही फलवान् होते हैं, ठीक वैसे ही जो शास्त्रपूर्वक शब्दों का प्रयोग करता है; केवल वही अभ्युदय से युक्त होता है।

६.१. अथ 'व्याकरणम्' इत्यस्य शब्दस्य कः पदार्थः?

प्रश्न : 'व्याकरण'–इस शब्द का पदार्थ क्या है?

६.२. सूत्रम्।

उत्तर : [वर्तमान में 'पाणिनीय अष्टाध्यायी' के] 'सूत्र' ही।

६.३. तर्हि सूत्रे व्याकरणे षष्ठ्यर्थो नोपपद्यते–व्याकरणस्य सूत्रमिति।

प्रश्न : [यदि साक्षात् वे सूत्र ही व्याकरण है,] तब तो "व्याकरण के सूत्र"–इस कथन में [सम्बन्धबोधक] षष्ठी-विभक्ति ('के') ठीक नहीं बनेगा।

[यहाँ समझाने के लिए 'व्याकरण' एवं उसके 'सूत्रों' में भेद को स्वीकार किया जा रहा है।]

६.४. नैष दोषः, व्यपदेशिवद्भावेन भविष्यति।

उत्तर : कोई दोष नहीं है; क्योंकि व्यपदेशिवद्भाव से हो जाएगा।

['व्यपदेशिवद्भाव' का अर्थ है : गौण में मुख्यता का औपचारिक आरोप। उदाहरण : यद्यपि भीम युधिष्ठिर का अनुज है, किन्तु अनुज भीम (गौण) में अर्जुन की विवक्षा से अग्रजत्व (मुख्यता) का आरोप हो जाता है। ठीक ऐसे ही; व्याकरण-शास्त्र मुख्य है, पाणिनीय अष्टाध्यायी के सूत्र उससे गौण हैं। किन्तु औपचारिक रूप से उन सूत्रों को ही साक्षात् व्याकरण मान लिया जाता है। इसलिए षष्ठी-विभक्ति मानने में कोई दोष नहीं लगता।]

शोधार्थी, वेदान्त-विभाग,
श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रीय विश्वविद्यालय

(परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित)

योग-ध्यान स्वाध्याय शिविर

संवत् २०८१, फाल्गुन कृष्ण अष्टमी से अमावस्या तक, तदनुसार २१ से २७ फरवरी २०२५

इस योग-साधना शिविर में योग सम्बन्धी विषयों का वैदिक-दर्शनों व उपनिषदों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

इस शिविर में निम्नलिखित प्रशिक्षक का सान्निध्य प्राप्त होगा -

०१. स्वामी विदेह योगी	०२. डॉ. सुरेन्द्र कुमार
०३ डॉ. वेदपाल	०४ स्वामी ओमानन्द सरस्वती
०५. डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी	०६. आचार्य अंकित प्रभाकर

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक शिविरार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।

२. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।

३. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।

४. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।

५. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।

६. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।

७. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।

८. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

९. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२९४८६९८, मो. ८८९०३१६९६१, ८८२४१४७०७४, ९९११११९७०७३, ९४१४५८९५१०) से सम्पर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार अतिरिक्त भुगतान से की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष

दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गम्भीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क २००० रु. मात्र जमा करना होगा। पृथक् कक्ष का शुल्क २००० रु. अतिरिक्त देय है। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारम्भ दिनांक से एक दिन पहले सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर में पहुँच जाना आवश्यक है, क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर **दूरभाष :** ०१४५-२९४८६९८,
मो.नं. ८८९०३१६९६१, ८८२४१४७०७४, ९९११९९७०७३

– : मार्ग : –

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता

महोदय,

सादर नमस्ते!

उपर्युक्त विषयान्तर्गत निवेदन है कि प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी ऋषि मेला १८, १९ एवं २० अक्टूबर २०२४ को ऋषि उद्यान, महर्षि दयानन्द मार्ग, अजमेर में आयोजित किया गया था। इस अवसर पर विभिन्न सम्मेलन आयोजित किए गये परन्तु **वेद कण्ठस्थीकरण** की प्रतियोगिताएँ नहीं हो सकी।

अत: अब परोपकारिणी सभा अजमेर के स्थापना दिवस (२७ फरवरी २०२५) के अवसर पर वेद कठस्थीकरण प्रतियोगिता का आयोजन होगा। अत: आप अपने गुरुकुल में अध्ययनरत ब्रह्मचारी/ब्रह्मचारिणी जिन्हें वेद कण्ठस्थ हैं उनके नाम विधिवत् रूप से २७ फरवरी २०२५ से पूर्व मन्त्री परोपकारिणी सभा केसरगंज, अजमेर के पते पर भिजवाने का श्रम करें, ताकि प्रतियोगिता में संभागीगणों के निर्णय के बाद उन्हें पुरस्कृत किया जा सके। इससे वेद कण्ठस्थीकरण में ब्रह्मचारी/ब्रह्मचारिणियों की रुचि बढ़ेगी वहीं वेदों के कण्ठस्थीकरण के प्रति जाग्रति पैदा होगी। सद्भावनाओं सहित

मन्त्री

आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार

दिनांक १८-१९-२० अक्टूबर २०२४ को ऋषि मेले के अवसर पर निम्नलिखित महानुभावों ने वानप्रस्थ की दीक्षा ली। दीक्षा के पश्चात् ये सभी अपने-अपने क्षेत्र में जाकर कार्य करें। क्षेत्र में नशाबन्दी, गोरक्षा व आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार का कार्य करें।

१. श्री सोम मुनि - बालोतरा, बाड़मेर, ९४१३०२९०५४

२. श्री महानन्द स्वामी - गोहाना, हरियाणा, ९७५९५९०५६४

३. श्री देवमुनि - भरतपुर, ९७८२७०२२०४

४. श्री मुनि प्रेमानन्द - चुरु, नागौर, जोधपुर, ९७७२३८४७२५

५. श्री दिवेश मुनि - बाड़मेर, ९६८००१७२३७

६. श्री मंगल मुनि - मन्दसौर, ८१२०२६५३२१

७. श्री सत्यमुनि - जीन्द, हरियाणा, ९४१६७१७९३८

८. श्री परम मुनि - झारखण्ड, टाटानगर, ९३०८२८८८११

९. श्री महेन्द्र मुनि - पिपलिया मण्डी, ९४०७१६१४२४

सत्यार्थ प्रकाश

सत्यार्थप्रकाश धार्मिक ज्ञान का भण्डार, विद्या सम्बन्धी खोज का कोष, वैदिक धर्म का जंगी मैगज़ीन है। जिसने एक बार इसे पूर्णतया समझकर पढ़ लिया, फिर सम्भव नहीं कि वह कभी वैदिक धर्म से दूर हटे। हम दावे से कह सकते हैं कि प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क को सत्यार्थप्रकाश बहुत-सी नवीन बातें दिखलाता है।

सत्यार्थप्रकाश मतमतान्तरों की अविद्या में सोये हुए पुस्तकों को जगाने का काम देता हुआ उनको मतमतान्तरों के आलस्य का त्याग कराकर वेद सूर्य के दर्शन के लिए पुरुषार्थी बना देता है।

सत्यार्थप्रकाश उस मनुष्य के समान है जो एक हाथ में ओषधि की बोतल और दूसरे हाथ में रोगी के लिए आरोग्यदायक भोजन लिये खड़ा हो।

-आर्यपथिक पं. लेखराम जी

आभूषण

सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है। सोने, चाँदी, माणिक, मोती, मूंगा आदि रत्नादि से युक्त आभूषणों के धारण कराने से मनुष्य का आत्मा सुभूषित कभी नहीं होता क्योंकि आभूषणों के धारण करने से केवल देहाभिमान, विषयासक्ति और चोर आदि का भय तथा मृत्यु का भी सम्भव है।

- सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास

परोपकारिणी सभा अजमेर के नवीन प्रकाशन रियायती मूल्यों पर

पुस्तक का नाम	पृ. सं.	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	१३९२	८००	५००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	३३६	२००	१००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९३८	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	८१४	५००	२५०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २११७, चार भागों का मूल्य = १३००/-

डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:-दूरभाष - 0145-2460120, चलभाष - 7878303382

VEDIC PUSTKALAYA
0510800A0198064
1342679A
0510800A0198064.mab@pnb

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाताधारक का नाम - वैदिक पुस्तकालय, अजमेर

(VEDIC PUSTKALAYA, AJMER)

बैंक का नाम - पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

0008000100067176

IFSC - PUNB0000800

UPI ID :

0510800A0198064.mab@pnb

प्रवेश सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में सञ्चालित आर्ष गुरुकुल में प्रवेश प्रारम्भ हैं। वैदिक धर्म के उपदेशक-प्रचारक बनने के इच्छुक युवा प्रवेश हेतु शीघ्र आवेदन करें।

प्रवेश हेतु अविवाहित एवं आठवीं उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। भोजन एवं आवास की निःशुल्क सुविधा है। **सम्पर्क सूत्रः ८८९०३१६९६१**

आर्य संस्थाओं से आग्रह

आर्य समाज एवं अन्य आर्य संस्थाएं अपने निर्वाचन, वार्षिकोत्सव और योग शिविर आदि आयोजन के संक्षिप्त समाचार परोपकारी में प्रकाशनार्थ भिजवा सकते हैं।

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते? तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में पञ्चमहायज्ञ अवश्य करणीय कर्म हैं। इन्हीं में से एक है- अतिथि यज्ञ। प्रत्येक गृहस्थ के लिए अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और वह राशि एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल/आश्रम में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय। इस राशि को प्रदान कर सभा के माध्यम से अतिथि यज्ञ सम्पन्न कर सकते हैं।

सभा की योजना के अनुसार प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी होता सदस्यों में अंकित किया जाता है, ऐसे सज्जनों के नाम परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक/सभा के खाते में ऑनलाइन द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं।

आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि, जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे, तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है।

दूरभाष - **8890316961**

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु बैंक विवरण

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715** **IFSC-SBIN0031588**

email : psabhaa@gmail.com **सूचना देने हेतु चलभाष - 8890316961**

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(०१ से ३० जून २०२४ तक)

१. श्री गणपत लाल व श्रीमती शिवकान्ता तापड़िया, कोटा २. श्री प्रेम काबरा, अजमेर ३. श्री नरोत्तम कुमार शर्मा, मुम्बई ४. वैद्य कान्हाराम, श्रीगंगानगर ५. श्री जगदीशचन्द्र यादव, अजमेर ६. श्री विमल कपूर, नई दिल्ली ७. भक्तराम ८. श्रीमती तुलिका साहू, विलासपुर ९. श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर', अजमेर १०. श्री जे.एस. सामन्त, नैनीताल ११. जस्टिस प्रीतमपाल सिंह, चण्डीगढ़ १२. श्री मोहित मेहता, गुरुग्राम १३. श्रीमती गंगाबाई बैजनाथ राव, नांदेड़ १४. श्री दिनेश आर्य, गुरुग्राम १५. श्री अजय छोकरा, गुरुग्राम १६. श्री विजय पाल राठी व श्रीमती कविता राठी, गाजियाबाद १७. श्रीमती मनोरमा साहू, इन्दौर १८. श्रीमती किरण रानू, चण्डीगढ़ १९. श्रीमती निर्मला गुप्ता, अजमेर २०. श्री सुभाषचन्द कथूरिया, हिसार २१. श्री ए.के. गुप्ता, मेरठ २२. मै. स्वास्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती २३. श्रीमती प्रकाशवती राठी व श्री महेन्द्र सिंह राठी, सोनीपत २४. श्री आदित्य मुनि व श्रीमती कंचन गहलोत, अजमेर २५. श्रीमती सीमा दाधीच, अजमेर २६. श्री मगन सिंह त्यागी, गाजियाबाद २७. श्री महावीर यादव, जयपुर २८. श्री नारायण सिंह डाबी, सिरोही २९. मेजर महावीर सिंह ३०. आचार्य चन्द्रेश, गांधीधाम।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(०१ से ३० जून २०२४ तक)

१. श्रीमती सायर कंवर, पाली २. डॉ. चन्द्रज्योत्स्ना, जोधपुर ३. श्रीमती रतन कंवर लाखोटिया, डांडेली ४. श्री सत्यनारायण काबरा, अजमेर ५. श्रीमती द्रौपदी देवी वर्मा, श्रीगंगानगर ६. श्री ओमप्रकाश सारस्वत, अजमेर ७. श्री रोमेश अरोड़ा, दिल्ली ८. श्री चन्द्रभान, जयपुर ९. श्री राधेश्याम शर्मा, अजमेर १०. श्री हेमन्त शारदा, अजमेर ११. श्रीमती अलका, भीलवाड़ा १२. श्रीमती सुमित्रा कालड़ा, गुरुग्राम १३. श्रीमती मीनू गुलिया, गुरुग्राम १४. श्री जतनपाल, नोएड़ा १५. श्री अजय सुनीता छोकरा, गुरुग्राम १६. वैद्य ओमपाल सिंह आर्य, गौतमबुद्ध नगर १७. श्री रामनिवास प्रजापति, जेठाना, अजमेर १८. श्री ओमविजय, भीनाय, अजमेर १९. श्री नवीन कुमार वर्मा, अलीगढ़ २०. श्रीमती कविता राठी, साहिबाबाद २१. श्रीमती प्रेमलता शर्मा, अजमेर २२. श्रीमती गीता देवी चौहान, अजमेर २३. श्री नितिन श्री किरण सतपुते, नीलांगना २४. श्री महावीर प्रसाद, रमेशचन्द अजमेरा, भीलवाड़ा २५. श्री आदित्यमुनि व श्रीमती कंचन गहलोत, अजमेर २६. श्री अनिल गुप्ता, चण्डीगढ़ २७. श्री दिवाकर पाण्डे, जयपुर २८. श्री ठाकुर, अजमेर २९. श्रीमती सीमा दीधीच, अजमेर ३०. श्रीमती निधि साहू, अजमेर ३१. डॉ. संजीव कुमार बालियान, मुजफ्फरनगर ३२. श्री नरेश सचदेवा, गुरुग्राम।

अन्य प्रकल्पों हेतु सहयोग राशि

१. श्री शेष मिश्रा २. श्री जगबीर सिंह, पटना ३. श्री सोहनलाल, यू.एस.ए. ४. श्री सौजन्य गोयल, मुजफ्फरनगर ५. श्री लक्ष्मीनारायण गुप्ता, श्रीगंगानगर ६. श्री विपिन कुमार, दिल्ली ७. श्रीमती प्रवीण सिंघल, करनाल ८. श्री अनीश, करनाल ९. आर्यसमाज, दोहरिया १०. श्री महेन्द्र कुमार, शोभा आर्या, गुरुग्राम ११. श्रीमती आकांक्षा प्रणव, गुरुग्राम १२. श्रीमती रिषिका अनुव्रत आर्या, गुरुग्राम १३. श्रीमती महिमा सिद्धान्त लालवानी, पूना १४. श्री दक्ष छोकरा, गुरुग्राम १५. श्रीमती सरोज मनचन्दा, गुरुग्राम १६. श्रीमती पुष्पा रहेजा, नई दिल्ली १७. श्रीमती दीपा अरोड़ा, गुरुग्राम १८. श्रीमती सुमित्रा कालड़ा, गुरुग्राम १९. श्रीमती निर्मला देवी चौधरी, गुरुग्राम २०. श्री ओंकार सिंह, गुरुग्राम २१. श्री अनुज सिंह आर्य, पटना २२. श्री जयसिंह गहलोत, जोधपुर २३. श्री संजय सेदरा, अजमेर २४. डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी', अजमेर २५. आर्यसमाज, पीलीभीत २६. श्री नन्दकिशोर, अजमेर २७. श्री संजीव शेरावत, गुरुग्राम २८. श्री सात्विक, गुरुग्राम २९. श्री राजेश कुमार, गुरुग्राम ३०. मेहता परिवार, गुरुग्राम ३१. श्री नरेश सचदेवा, गुरुग्राम ३२. श्री मनीष सोनी, गुरुग्राम।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा ऋषि उद्यान, अजमेर में कई वर्ष से संचालित आयुर्वैदिक चिकित्सालय सोमवार को छोड़ सप्ताह में ६ दिन मार्च से अक्टूबर सायं ५ से ७ बजे तक व नवंबर से फरवरी सायं ४ से ६ बजे तक दो घण्टे खुलेगा।

इसमें वरिष्ठ आयुर्वेद चिकित्सक की सेवा उपलब्ध है। चिकित्सा परामर्श व चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। यदि आप अपने धन को इस पुण्य कार्य में लगाना चाहते हैं, तो परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सहयोग भेज सकते हैं। सहयोग भेजकर ८८९०३१६९६१ पर सूचित अवश्य कर देवें।

- मन्त्री

आवश्यक सूचना

परोपकारी के सुधि पाठकों से निवेदन है कि कृपया अपना नाम व पते के साथ दूरभाष संख्या भी अंकित करावें ताकि परोपकारिणी सभा के आगामी कार्यक्रमों से सम्बन्धित सूचनाएँ आपको दूरभाष पर मैसेज के माध्यम से भेजी जा सकें।

परोपकारिणी सभा दूरभाष संख्या - ८८९०३१६९६१

आनन्द

जिस परमात्मा का यह 'ओ३म्' नाम है उसकी कृपा और अपने धर्मयुक्त पुरुषार्थ ये हमारे शरीर, मन और आत्मा का विविध दु:ख जो कि अपने [से] दूसरे से होता है, नष्ट हो जावे और हम लोग प्रीति से एक-दूसरे के साथ वर्त्त के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि से सफल होके सदैव स्वयं आनन्द में रहकर सब को आनन्द में रखें।

- संस्कार विधि

‘सत्यार्थ प्रकाश’ एवं ‘महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र’ प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत अमर ग्रन्थ ‘सत्यार्थप्रकाश’ ने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति ‘वैचारिक क्रान्ति’ को जन्म दिया। अतः परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व ‘विश्व पुस्तक मेला’ दिल्ली में प्रतिवर्ष **‘सत्यार्थप्रकाश’** के साथ **‘महर्षि का जीवन-चरित्र’** एवं **‘आर्याभिविनय’** पुस्तक का वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है।

एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। ५०० **से कम प्रतियों पर स्टिकर लगाकर तथा ५०० या अधिक प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित किया जाएगा।**

१५० रु. प्रति सैट के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं।

अपने दान के साथ ‘सत्यार्थप्रकाश वितरण’ अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी राशि दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। धन्यवाद।

- कन्हैयालाल आर्य, मंत्री, परोपकारिणी सभा

सभा प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

बैंक विवरण

खाताधारक का नाम

परोपकारिणी सभा, अजमेर

(PAROPKARINI SABHA AJMER)

बैंक का नाम

भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-

10158172715

IFSC - SBIN0031588

UPI ID : PROPKARNI@SBI

महर्षि दयानन्द ने देश की सोई चेतना को जगाया

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने देश की सोई चेतना को जगाया

रक्षा मन्त्री श्री राजनाथ सिंह ने कहा कि गुजरात की धरती पर जब स्वामीजी का जन्म हुआ था तब देश अंग्रेजों की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। अंग्रेजी शासक भारत और भारतीय संस्कृति को दोयम दर्जे का बता कर उसका सार्वजनिक रूप से उपहास उड़ाते थे। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भारत की सोई चेतना को जगाने का काम किया।

रक्षा मन्त्री दिल्ली के भारत मंडपम में आर्य समाज के 150वें स्थापना वर्ष के अवसर पर आयोजित कार्यक्रम को संबोधित कर रहे थे। उन्होंने कहा कि उनका प्रभाव अंग्रेजी शासन से लड़ने वाले लाला लाजपत राय, राम प्रसाद बिस्मिल, स्वामी श्रद्धानन्द जैसे कई महापुरुषों पर पड़ा। स्वातंत्र्य वीर सावरकर ने उनकी भूमिका और योगदान के बारे में लिखा है कि स्वामीजी भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के पहले योद्धा थे। उन्होंने ही सबसे पहले स्वराज की मांग की थी।

सबसे पहले की स्वराज की मांग

रक्षा मन्त्री ने कहा कि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ही सबसे पहले स्वराज की मांग की थी। वह केवल वेदों की मीमांसा करने वाले ऋषि मात्र ही नहीं थे, बल्कि वे देश में नई सांस्कृतिक यात्रा के प्रकाश पुंज थे। हमारे वेद, भारतीय ज्ञान विज्ञान की गंगोत्री की तरह है।

बिना उद्गम समझे भारतीय ज्ञान गंगा का विस्तार समझ पाना मुश्किल ही नहीं नामुमकिन है। इसलिए स्वामीजी ने मूल की तरफ ही सबका ध्यान खींचा। वेदों में ऐसे ज्ञान हैं जिनका सहारा लेकर हम जलवायु परिवर्तन समेत आधुनिक युग की समस्याओं के भी समाधान ढूंढ सकते हैं। कार्यक्रम में गुजरात के राज्यपाल आचार्य देवव्रत, प्रख्यात उद्योगपति श्री सुरेंद्र कुमार आर्य और दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री विनय आर्य आदि सहित बड़ी संख्या में आर्य जन उपस्थित थे। परोपकारिणी सभा का प्रतिनिधित्व सभा मंत्री श्री कन्हैयालाल आर्य एवं ट्रस्टी सत्यानन्द आर्य ने किया।

आर जे/ए जे/80/2024-2026 तक   प्रेषण : १०-११ दिसम्बर २०२४   आर.एन.आई. ३९४०९/५९

हैदराबाद सत्याग्रह के फील्ड मार्शल

लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

जन्म दिवस 11 जनवरी

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज,

अजमेर (राजस्थान) ३०५००१

सेवा में,